अनन्य

‘हिंदी की नयी उड़ान’

मासिक पत्रिका

जुलाई -अगस्त 2023
(संयुक्तांक)

IN THE DARK TIMES WILL THERE
ALSO BE SINGING
YES, THERE WILL ALSO BE SINGING
ABOUT THE DARK TIMES
IN DEFENCE OF OUR
SECULAR TRADITION
लहू का रंग एक

अनन्य

‘हिंदी की नयी उड़ान’

प्रबंध संपादक
अनूप भार्गव

संपादक
डॉ. जगदीश व्योम

कला संपादक
विजेंद्र एस. विज

संपादन सलाहकार
डॉ॰ हरीश नवल

भारतीय कौंसलावास, न्यूयॉर्क की हिंदी पत्रिका

अनन्य
मासिक पत्रिका
जुलाई-अगस्त 2023 (संयुक्तांक)
भारतीय कौंसलावास, न्यूयॉर्क की हिंदी पत्रिका

प्रबंध संपादक
अनूप भार्गव

संपादक
डॉ॰ जगदीश व्योम

कला संपादक
विजेन्द्र एस. विज

संपादन सलाहकार
डॉ॰ हरीश नवल

तकनीकी सलाहकार
बालेन्दु शर्मा दाधीच

संपादन सहयोग
आभा खरे / स्वरांगी साने

व्यवस्था
अमित खरे / गीता घिलोरिया

सर्वाधिकार सुरक्षित
पत्रिका में प्रकाशित सामग्री के अन्यत्र उपयोग हेतु लेखक / प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। प्रकाशित सामग्री हेतु सम्बंधित लेखक पूरी तरह से उत्तरदायी होंगे।

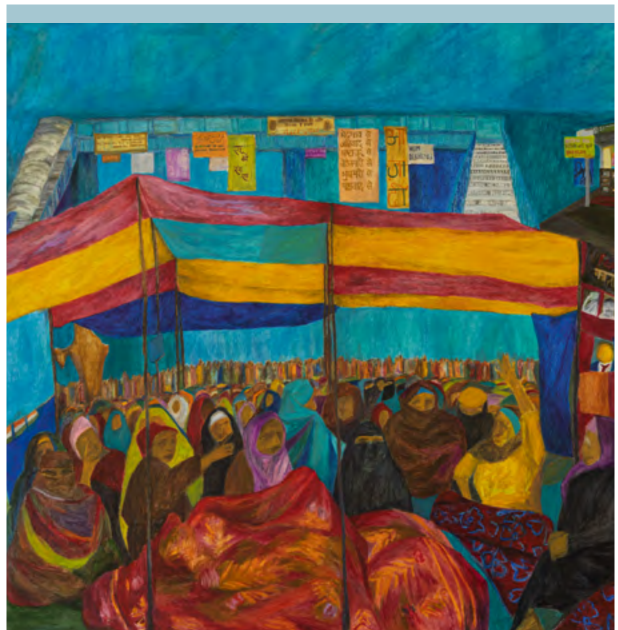

COVER PAGE
Artist: Aban Raza
'Shaheen Bagh, Delhi 2022
Oil on canvas 60 x 72 inch

संपर्क
रचनाकार अपनी रचनाएँ अनन्य में प्रकाशनार्थ यहाँ भेजे : sampadak.ananya@gmail.com

पाठक अपनी प्रतिक्रियाएँ और सुझाव यहाँ भेजें
pratikriya.ananya@gmail.com

आइकॉन पर क्लिक करने से
आप ऑडिओ रिकॉर्डिंग सुन सकते हैं

आइकॉन पर क्लिक करने से
आप विडियो रिकॉर्डिंग सुन सकते हैं

अनुक्रम

	पृष्ठ संख्या
संपादकीय : **डॉ. जगदीश व्योम**	**06**
गीत/नवगीत : पाँच नवगीत **-श्रीकृष्ण सरल**	**08**
गीत/नवगीत : पाँच नवगीत **-राजेन्द्र वर्मा**	**12**
कविता : दो कविताएँ **-उषा राय**	**15**
कहानी : 'पुजारिन अइया' **-डॉ. विद्याविन्दु सिंह जी**	**17**
कविता : **अन्नदा पाटनी**	**31**
कहानी : 'आदिम राग' **-डॉ. शिवजी श्रीवास्तव**	**33**
ग़ज़लें : पाँच ग़ज़लें - **विनीता तिवारी**	**46**
लेख : 'अनाम वीरांगना नीरा आर्या' **-सूर्य कान्त शर्मा**	**48**
कविता : **संगीता ज़ैदी**	**53**
साहित्यिक विरासत से : 'भारतवर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है ?' **-भारतेन्दु हरिश्चन्द्र**	**55**
लोक जीवन से : 'बोलना उनसे सीखिये , जो पढ़े-लिखे नहीं हैं !' **-कन्हैयालाल मिश्र, प्रभाकर**	**62**
कला : 'मिथिला कला की आधुनिक अभिव्यक्ति हैं अलका दास के चित्र' **-विनय कुमार**	**65**
पाठकीय प्रतिक्रियाएँ	**71**
इस अंक के चित्रकार :	
अबान रज़ा - कवर पृष्ठ : शाहीन बाग़, दिल्ली-2022, एवं अंदर के चित्र	**72**
विजेंद्र एस विज - पृष्ठ भाग : जफ़र-बहादुरशाह एवं अंदर के रेखाचित्र	**पृष्ठ भाग**

दो शब्द...

'अनन्य' का जुलाई-अगस्त 2023 अंक आपके समक्ष है। अगस्त माह का बहुत गहरा सम्बंध आजादी से है, यह महीना, भारत की आजादी के महोत्सव का महीना है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी जिन्होंने मात्र 34 वर्ष और 27 दिन का अल्प जीवन पाया, परन्तु इतने लघु जीवन में उन्होंने भारत की आज़ादी के लिए, हिन्दी भाषा के उत्थान के लिए, जितना विपुल साहित्य-सृजन किया है; शायद कोई पाँच सौ वर्ष में भी नहीं कर पायेगा। केवल मात्रा ही नहीं, उनके सृजित साहित्य का स्तर बहुत ऊँचा है। गद्य-पद्य की हर विधा में भारतेन्दु जी ने लिखा है, शायद ही कोई विधा बची हो, जिसमें भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी ने नहीं लिखा हो।

यह सच है कि भारत-वासियों में प्रतिभा कूट-कूट कर भरी है, आवश्यकता उन्हें प्रेरित करने की है। भारतेन्दु जी ने बलिया के ददरी मेला में बोलते हुए कहा था-

"हिन्दुस्तानी लोगों को कोई चलाने वाला हो तो ये क्या नहीं कर सकते। इनसे इतना कह दीजिए 'का चुप साध रहा बलवाना' फिर देखिए हनुमान जी को अपना बल कैसा याद आ जाता है ... ।'

भारतेन्दु जी का यह कथन पग-पग पर व्यावहारिक रूप में देखा जा सकता है।

आज़ादी का एक रूप यह भी है कि हमें अपनी बुद्धि के अश्वों को निर्बाध गति से दौड़ाने का स्वतंत्र अवसर मिले और इस अवसर को हम सकारात्मक सोच के साथ विकास के पथ प्रशस्त करने की दिशा में उपयोग करते रहें, मानवता के हित में कार्य करते रहें, तो हम बहुत कुछ ऐसा कर सकते हैं जिसे देखकर दुनिया दाँतों तले उँगली दबा ले।

यह भी सच है कि साहित्य और विज्ञान का आपस में बहुत गहरा सम्बंध है। साहित्य कल्पनाओं के वेगवती अश्व दौड़ाकर सपनों का एक भव्य-भवन तैयार करता है और विज्ञान इन सपनों का सूक्ष्म बुद्धि और ज्ञान-बल से निरीक्षण-परीक्षण करता है तथा साहित्य द्वारा सँजोये गए सपनों में से सूत्र खोजकर उन्हें साकार करने के प्रयास में जुट जाता है। जब ये सपने साकार होते हैं, तो मानवता का चेहरा खिल उठता है, विकास का पथ नये-नये रूपों में हमारे सामने उपस्थित हो जाता है।

जब साहित्य को स्वतंत्र रूप से कल्पना लोक में विचरण कर सपनों का एक आभा-मंडल तैयार करने की आजादी होती है और विज्ञान को स्वतंत्र रूप से उन्हें साकार करने की दिशा में प्रयोग करने के प्रति देश की कुशल व्यवस्था की ओर से प्रेरणा मिलती है, तो ऐसे ही प्रतिफल सामने आते हैं, जिसकी उपलब्धि 23 अगस्त 2023 को हुई, जो दुनिया के सामने है।

न जाने कब से चन्दा के घर जाने की कल्पनाएँ साहित्य करता रहा और विज्ञान उन कल्पनाओं को साकार रूप देने में चुपचाप जुटा रहा। परिणाम हमारे सामने चन्द्रयान-3 के रूप में है... जो चन्द्रमा के साउथ पोल पर आखिर पहुँच ही गया।

साहित्य की अपरिमित काल्पनिक उड़ान में वैज्ञानिक-दृष्टि भी कहीं न कहीं जुड़ी रहे और विज्ञान, साहित्य की कल्पनाओं में से मानवता के हित-सूचक सूत्रों को अपनी विहंगम दृष्टि से चिह्नित करता रहे तथा व्यवस्था इनके लिए संसाधन जुटाते हुए इन्हें प्रेरित करती रहे और कार्य करने की आजादी देती रहे, यही आजादी का सच्चा अर्थ और उच्च आदर्श भी है। वर्तमान में ऐसा हो भी रहा है।

अनन्य का यह अंक आपको कैसा लगा... पढ़कर अपनी प्रतिक्रिया अवश्य भेजें और रचनाएँ भी। आपके पत्रों की प्रतीक्षा रहेगी।

अभी बस इतना ही

-डा० जगदीश व्योम
संपादक, अनन्य

गीत

श्रीकृष्ण सरल

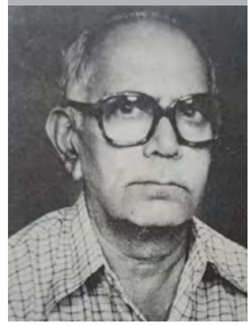

भारत के अमर शहीदों पर दुनिया में सबसे अधिक 15 महाकाव्य और 124 पुस्तकों का सृजन करने वाले, जिनके महाकाव्य 'शहीद भगतसिंह' का लोकार्पण करने के लिए शहीद भगत सिंह की माता श्रीमती विद्यावती जी ने स्वयं उज्जैन आकर लोकार्पण किया, ऐसे महाकवि श्रीकृष्ण सरल जी का जन्म 01 जनवरी 1919 को अशोक नगर, गुना (म.प्र.) में हुआ। चन्द्र शेखर आजाद सहित अनेक शहीदों के साथ रहे सरल जी ने आजीवन शहीदों पर ही लिखा। विगत दिनों अमेरिका की स्टेनफर्ड यूनिवर्सिटी के लोकप्रिय रेडियो कार्यक्रम चाय टाइम में सरल जी पर एक घंटे का कार्यक्रम प्रसारित किया गया जिसे दुनिया भर के श्रोताओं ने सुना और भरपूर सराहा।

सरल जी के कुछ गीत प्रकाशित किए जा रहे हैं। आपकी प्रतिक्रियाओं की प्रतीक्षा रहेगी।

डा. जगदीश व्योम

श्रीकृष्ण सरल के पाँच गीत

1. राष्ट्र के श्रृंगार ! मेरे देश के साकार सपनो !

राष्ट्र के श्रृंगार ! मेरे देश के साकार सपनो
देश की स्वाधीनता पर आँच तुम आने न देना
जिन शहीदों के लहू से लहलहाया चमन अपना
उन वतन के लाडलों की याद मुर्झाने न देना
देश की स्वाधीनता पर ...

तुम न समझो देश की स्वाधीनता यों ही मिली है
हर कली इस बाग की कुछ खून पीकर ही खिली है
मस्त सौरभ रूप या जो रंग फूलों को मिला है
यह शहीदों के उबलते खून का ही सिलसिला है
बिछ गये वे नींव में दीवार के नीचे गड़े हैं
महल अपने शहीदों की छातियों पर ही खड़े हैं
नींव के पत्थर तुम्हें सौगंध अपनी दे रहे हैं
जो धरोहर दी तुम्हें वह हाथ से जाने न देना
देश की स्वाधीनता पर...

देश के भूगोल पर जब भेड़िये ललचा रहे हों
देश के इतिहास को जब देशद्रोही खा रहे हों
देश का कल्याण गहरी सिसकियाँ जब भर रहा हो
आग–यौवन के धनी ! तुम खिडकियाँ शीशे न तोड़ो
भेड़ियों के दाँत तोड़ो गर्दनें उनकी मरोड़ो
जो विरासत में मिला वह खून तुमसे कह रहा है–
सिंह की खेती किसी भी स्यार को खाने न देना
देश की स्वाधीनता पर ...

तुम युवक हो काल को भी काल से दिखते रहे हो
देश का सौभाग्य अपने खून से लिखते रहे हो
ज्वाल की भूचाल की साकार परिभाषा तुम्हीं हो

देश की समृद्धि की सबसे बड़ी आशा तुम्हीं हो
ठान लोगे तुम अगर युग को नई तस्वीर दोगे
गर्जना से शत्रुओं के तुम कलेजे चीर दोगे
दाँव पर गौरव लगे तो शीश दे देना विहँस कर
देश के सम्मान पर काली घटा छाने न देना
देश की स्वाधीनता पर...

वह जवानी जो कि जीना और मरना जानती है
गर्भ में ज्वालामुखी के जो उतरना जानती है
बाहुओं के जोर से पर्वत जवानी ठेलती है
मौत के हैं खेल जितने भी जवानी खेलती है
नाश को निर्माण के पथ पर जवानी मोड़ती है
वह समय की हर शिला पर चिह्न अपने छोड़ती है
देश का उत्थान तुमसे माँगता है नौजवानों
दहकते बलिदान के अंगार कजलाने न देना
देश की स्वाधीनता पर ...

2. मैं फूल नहीं काँटे अनियारे लिखता हूँ

अपने गीतों से गंध बिखेरूँ मैं कैसे
मैं फूल नहीं काँटे अनियारे लिखता हूँ
मैं लिखता हूँ मँझधार, भँवर, तूफान प्रबल
मैं नहीं कभी निश्चेष्ट किनारे लिखता हूँ।

जो जीवन-पथ पर लीक छोड़कर चले सदा
जो हाथ जोड़कर, झुककर डरकर नहीं चले
जो चले, शत्रु के दाँत तोड़कर चले सदा
मैं गायक हूँ उन गर्म लहू वालों का ही
जो भड़क उठें, ऐसे अंगारे लिखता हूँ
मैं फूल नहीं काँटे अनियारे ...
जो नहीं लचकते, नहीं कभी बल खाते थे
उनकी आँखों में स्वप्न प्यार के पले नहीं
जब भी आते, बलिदानी सपने आते थे
मैं लिखता उनकी शौर्य–कथाएँ लिखता हूँ
उनके तेवर के तेज दुधारे लिखता हूँ
मैं फूल नहीं काँटे अनियारे ...

मैं लिखता उनकी बात, रहे जो औघड़ ही
हाँ वे, थे जिनके मेरु-दण्ड लोहे के थे
जो देश-धरा के लिए बहे, वह शोणित है
अन्यथा रगों में बहने वाला पानी है,
इतिहास पढ़े या लिखे, जवानी वह कैसे
इतिहास स्वयं बन जाए, वही जवानी है
मैं बात न लिखता पानी के फव्वारों की
जब लिखता, शोणित के फव्वारे लिखता हूँ
मैं फूल नहीं काँटे अनियारे ...

3. मैं अमर शहीदों का चारण

मैं अमर शहीदों का चारण उनके गुण गाया करता हूँ
जो कर्ज राष्ट्र ने खाया है, मैं उसे चुकाया करता हूँ।

यह सच है, याद शहीदों की हम लोगों ने दफनाई है
यह सच है, उनकी लाशों पर चलकर आज़ादी आई है,
यह सच है, हिन्दुस्तान आज जिन्दा उनकी कुर्वानी से
यह सच अपना मस्तक ऊँचा उनकी बलिदान कहानी से
वे अगर न होते तो भारत मुर्दों का देश कहा जाता,
जीवन ऐसा बोझा होता जो हमसे नहीं सहा जाता,
यह सच है दाग गुलामी के उनने लोहू सो धोये हैं,
हम लोग बीज बोते, उनने धरती में मस्तक बोये हैं
इस पीढ़ी में, उस पीढ़ी के मैं भाव जगाया करता हूँ
मैं अमर शहीदों का चारण...

यह सच उनके जीवन में भी रंगीन बहारें आई थीं,
जीवन की स्वप्निल निधियाँ भी उनने जीवन में पाई थीं,
पर, माँ के आँसू लख उनने सब सरस फुहारें लौटा दीं,
काँटों के पथ का वरण किया, रंगीन बहारें लौटा दीं।
उनने धरती की सेवा के वादे न किए लम्बे-चौड़े,
माँ के अर्चन हित फूल नहीं, वे निज मस्तक लेकर दौड़े,
भारत का खून नहीं पतला, वे खून बहा कर दिखा गए,
जग के इतिहासों में अपनी गौरव-गाथाएँ लिखा गए
उन गाथाओं से सर्दखून को मैं गरमाया करता हूँ
मैं अमर शहीदों का चरण ...

है अमर शहीदों की पूजा, हर एक राष्ट्र की परंपरा
उनसे है माँ की कोख धन्य, उनको पाकर है धन्य धरा,
गिरता है उनका रक्त जहाँ, वे ठौर तीर्थ कहलाते हैं,
वे रक्त-बीज, अपने जैसों की नई फसल दे जाते हैं
इसलिए राष्ट्र-कर्त्तव्य, शहीदों का समुचित सम्मान करे,
मस्तक देने वाले लोगों पर वह युग-युग अभिमान करे,
होता है ऐसा नहीं जहाँ, वह राष्ट्र नहीं टिक पाता है,
आजादी खण्डित हो जाती, सम्मान सभी बिक जाता है
यह धर्म-कर्म यह मर्म सभी को मैं समझाया करता हूँ
मैं अमर शहीदों का चरण ...

पूजे न शहीद गए तो फिर, यह पंथ कौन अपनाएगा?
तोपों के मुँह से कौन अकड़ अपनी छातियाँ अड़ाएगा?
चूमेगा फन्दे कौन, गोलियाँ कौन वक्ष पर खाएगा?
अपने हाथों अपने मस्तक फिर आगे कौन बढ़ाएगा?
पूजे न शहीद गए तो फिर आजादी कौन बचाएगा?
फिर कौन मौत की छाया में जीवन के रास रचाएगा?
पूजे न शहीद गए तो फिर यह बीज कहाँ से आएगा?
धरती को माँ कहकर, मिट्टी माथे से कौन लगाएगा?
मैं चौराहे-चौराहे पर ये प्रश्न उठाया करता हूँ
मैं अमर शहीदों का चारण उनके यश गाया करता हूँ
जो कर्ज राष्ट्र ने खाया है, मैं उसे चुकाया करता हूँ।

4. सरल शहीदों का चारण था

नहीं महाकवि और न कवि ही, लोगों द्वारा कहलाऊँ
सरल शहीदों का चारण था, कहकर याद किया जाऊँ
लोग वाह वाही बटोरते, जब बटोरते वे पैसा
भूखे पेट लिखा करता वह, दीवाना था वह ऐसा।

लोग कहें बंदूक कलम थी, वह सन्नद्ध सिपाही था
शौर्य–वीरता का गायक वह, वह काँटों का राही था
लिख बलिदान कथाएँ वह, लोगों को आग्रह करता था
उनकी शिथिल शिराओं में, उफनाता लावा भरता था।

लोग कहें वह दीवाना था, जिसे देश की ही धुन थी
देश उठे ऊँचे से ऊँचा, मन में यह उधेड़–बुन थी
कभी किसी के मन में उसने, कुंठा बीज नहीं बोया
वीरों की यश गाथाओं से, हर कलंक उसने धोया।

मन्दिर रहा समूचा भारत, मानव उसको ईश्वर था
देश–धरा समृद्ध रहे यह, यही प्रार्थना का स्वर था
भारत–माता की अच्छी मूरत ही रही सदा मन में
महाशक्ति हो अपना भारत, यही साध थी जीवन में।

अन्यायों को ललकारा, ललकारा अत्याचारों को
रहा घुड़कता गद्दारों को, चोरों को बटमारों को।
रहा पुजारी माटी का वह, मार्ग न वह यह छोड़ सका,
हिला न पाया, कोई भी आघात न उसको तोड़ सका।
कोई भाव अगर आया तो, यही भाव मन में आया,
पाले रहा दर्द धरती का, गीतों में भी वह गाया—

हे ईश्वर! यह भारत मेरा, दुनिया में आदर पाए,
गौरवशाली जो अतीत था, वही लौटकर फिर आए।

भारत–वासी भाई–भाई, रहें प्यार से हिलमिल कर,
कीर्ति कौमुदी फैलाएँ वे, फूलों जैसे खिल–खिल दर।
सबके मन में एक भाव हो, अच्छा अपना भारत हो,
सबकी आँखों में उजले से उजला सपना भारत हो।

5. कहो नहीं करके दिखलाओ

कहो नहीं करके दिखलाओ
उपदेशों से काम न होगा
जो उपदिष्ट, वही अपनाओ
कहो नहीं, करके दिखलाओ।

अंधकार है! अंधकार है!
क्या होगा कहते रहने से,
दूर न होगा अंधकार वह
निष्क्रिय रहने से, सहने से
अंधकार यदि दूर भगाना
कहो नहीं तुम, दीप जलाओ
कहो नहीं, करके ...

यह लोकोक्ति सुनी ही होगी
स्वर्ग देखने, मरना होगा
बात तभी मानी जाएगी
स्वयं आचरण करना होगा
पहले सीखो सबक स्वयं
फिर और किसी को सबक सिखाओ
कहो नहीं, करके ...

कर्म, कर्म के लिए प्रेरणा
होते हैं उपदेश निरर्थक
साधु-वृत्ति से मन को माँजो
साधु वेश परिवेश निरर्थक
दुनिया भली बनेगी पीछे
पहले खुद को भला बनाओ
कहो नहीं, करके ...

कथनी है वाचाल कहाती
करनी रहती सदा मौन है,
मौन स्वयं अभिव्यक्ति सबल है
इसे जानता नहीं कौन है
नहीं सहारा लो कथनी का,
करनी से ही सब समझाओ
कहो नहीं, करके दिखलाओ।

-श्रीकृष्ण सरल

शहीद भागात सिंह जी की माता जी श्रीमती विद्यावती जी के साथ श्रीकृष्ण सरल जी।

राजेन्द्र वर्मा

बाराबंकी (उ.प्र.) में जन्में और वर्तमान में लखनऊ (उ.प्र.) में निवास कर रहे राजेन्द्र वर्मा सुप्रसिद्ध कवि हैं। कविता, कुण्डलिया, ग़ज़ल, नवगीत आदि विधाओं में लगातार सृजनशील हैं। इनके लगभग दो दर्जन काव्य-संग्रह प्रकाशित हुए हैं। उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान के श्रीनारायण चतुर्वेदी और महावीर प्रसाद द्विवेदी सम्मान सहित देश की अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

ईमेल - rajendrapverma@gmail.com

गीत/नवगीत

-राजेन्द्र वर्मा

1. काग़ज़ की नाव

बाढ़ अभावों की आयी है,
डूबी गली-गली,
दम साधे हम देख रहे
काग़ज़ की नाव चली ।

माँझी के हाथों में है
पतवार आँकड़ों की,
है मस्तूल उधर ही. इंगिति,
जिधर धाकड़ों की,

लंगर जैसे जमे हुए हैं
नामी बाहुबली ।

आँखों में उमड़े-घुमड़े हैं
चिन्ता के बादल.
कोरों पर सागर लहराया
भीगा है आँचल.

अपनेपन का दंश झेलती
क़िस्मत करमजली ।

असमंजस में पड़े हुए हम
जीवित शव जैसे ,
मत्स्य-न्याय के चलते साँसें
चलें भला कैसे ?

नौकायन करने वालों की
है अदला-बदली ।

2. सत्यनरायन

तेरी कथा हमेशा से सुनते आये हैं,
सत्यनरायन ! तू भी तो सुन
कथा हमारी ।

सत्य बोलने पर पाबन्दी लगी हुई है
किन्तु झूठ के रँग में दुनिया रँगी हुई है

रिश्ते हुए परास्त,
स्वार्थ ने बाज़ी मारी ।

बस्ती-बस्ती जंगल में ज्यों बदल गयी है
शान्त समीरण की तबियत भी मचल गयी है
पूजनीय हो गये
क्रूरता के व्यापारी ।

है वसन्त, लेकिन सूनी है डाली-डाली
ज्वलनशील तासीर हो गयी चन्दनवाली
मावस तो मावस,
पूनम भी हम पर भारी ।।

समय कुभाग लिये आगे-आगे चलता है
सपनों में भी अब तो केवल डर पलता है
घायल पंखों से-
उड़ने की है लाचारी।।

3. विलग साये

बँट गयी दुनिया मगर,
हम कुछ न कर पाये ।

घर बँटा दीवार खिंचकर,
बँट गये खपरैल-छप्पर,
मेड़ छाती ठोंक निकली
बाग़ भीतर, खेत भीतर,

हम किसी भी एक के
हिस्से नहीं आये ।

कुछ इधर हैं, कुछ उधर हैं,
आत्म से भी बेखबर हैं,
बात कैसी भी कहें हम,
छिड़ रहा जैसे समर है,

बह गयी कैसी हवा,
ख़ुद से विलग साये ।

बात का बनता बतंगड़,
मौन ही रोके हुए बड़,
होंठ हिलने को हुए ज्यों,
तानता है वक़्त थप्पड़,

आर्त मन कब तक भला
एकांत दुलराये ?

4. किससे करें गिला

रोटी मिले पेट-भर भाई !
समझो, बहुत मिला ।

दो जोड़ी कपड़े,
सिर पर छत—
सपने ही तो हैं,
भूखे-प्यासे संगी-साथी
अपने ही तो हैं ।

मिला न क़िस्मत
लिखने वाला,
किससे करें गिला !

फुटपाथों पर लगा हमारा
साझे का बिस्तर,
लोकतंत्र मुँह ढाँपे पहुँचा
पूँजीपति के घर,

बुढ़ा गये, लेकिन अभाव का
दरका नहीं क़िला ।

होनहार बिरवे के पत्ते
बने धनिक के गण,
वैभव की चाहत में खोये
परिवर्तन के क्षण,

बच्चे बदल रहे जिंसों में,
थमता न सिलसिला ।।

5. अपना काम किये

हम तो रहे हाशिये, लेकिन
अपना काम किये ।

मुखपृष्ठों पर वही रहे,
जो श्रेष्ठ-प्रमाणित थे,
बाँचा गया उन्हीं का लेखा,
जो संरक्षित थे,

हम तो रहे घूर पर, लेकिन
जलते हुए दिये ।

वे तो जीते रहे हमेशा
अपनी-ही ख़ातिर,
बाहर-बाहर भले बने,
भीतर-भीतर शातिर,

अपनों में कुछ उनके, लेकिन
बने हुए पहिये ।

आग बरसने वाले दिन
जैसे-तैसे गुज़रे,
आया तो आषाढ़, मगर
मेघों से अम्ल झरे,

मरना तय था, लेकिन, हम
जीवन भरपूर जिये ॥
००
-राजेन्द्र वर्मा

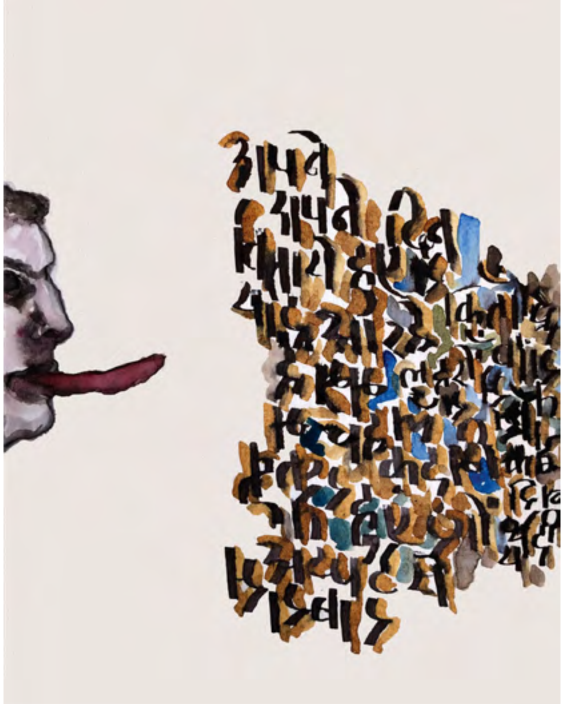

Delusion at midnight-I
Pen Ink & Water color on paper,
8.5x12 inch, Vijendra S Vij, 2020

उषा राय

ग्राम गुणउर, जिला गाज़ीपुर (उत्तर प्रदेश) में जन्मीं तथा लखनऊ में रह रहीं, पी.एच.डी धारी उषा राय सुप्रसिद्ध कवि, कहानीकार एवं समीक्षक हैं। अध्यापन कार्य से जुड़ी उषा राय की कहानी, कविता, आलोचना सहित तीन पुस्तकें प्रकाशित हैं।

ईमेल - usharai22@gmail.com

कविताएँ

-उषा राय

1.
शिरीष

अचानक किसी से हो जाता है लगाव
जिसकी छांव सुगंधित साथ मनमोहक
और अगर हो वह एक पेड़ जैसा हो

यह सफेद शिरीष कितना कोमल
पर बीज से उतना ही कठोर
कितना ऊँचा कितना प्रेमिल

हरफ़न मौला सा खुरदुरा सा
जिसका हर रेशा प्रेम गंध में डूबा
हवा से हिलती फलियों की खनक
झाँझर सी बजती है सुनसान रातों में
सदियाँ लाँघ कर आती है बेचैन पुकार
कहाँ हो आ जाओ चली आओ
काश यह वक्त रुक जाए
वह भी उससे लिपटकर वही बन जाए

चुपके से कानों में कह दे
केसर सी भीनी गंध वाले टोपी के फुदने
जैसे फूल वाले उस शिरीष से
जो निर्जन सड़क पर खड़ा है उपेक्षित सा

कि हाँ मैं पहचानती हूँ तुम्हें और
तुम्हें प्यार करना मानो यह कहना है कि
हम वसंत से नहीं हमसे वसंत है
और हम बचे रहेंगे हर मौसम में।

2.
बीड़ी पीती औरत

बीड़ी के कश में औचक
प्रेम की साहसिक यादों का डेरा
कहानियाँ छोड़कर जो गया
वह लौट कर कहाँ आया
आईं भी तो कुछ यादें कुछ बातें
कागज पर चिट्ठी के रूप में

उसके होठों पर आ टिकी बीड़ी
उम्र की बीसी के तीसरे ढलान पर
उसके साथ खाये मडुए की रोटी
भाँग की चटनी ताजे छाछ के स्वाद की याद

नृत्य करने लगे चलचित्र से उजड़े सन्नाटे में

उसे सुख देता है चौखट पर बैठना
पत्थरों की राह में दूर मोड़ तक देखना
पैरों में फँसी चप्पल न पैरों में न जमीन पर
जैसे कि मन न घर का न घाट का

देवदार काफ़ल नासपाती के पेड़
और बांज के जंगलों में दोनों ही मिलते
जान लेने और जान बचाने वाले

अब चिट्ठी तो क्या पढ़ी जाती
एक बीड़ी ही और सुलगायी जाती ।

-उषा राय

In Search of myself-I, 2020,
Pen Ink & Water color on paper, 8.5x12 inch,
Vijendra S Vij

डॉ० विद्याविन्दु सिंह

पद्मश्री सम्मान से अलंकृत डा० विद्याविन्दु सिंह का जन्म फैजाबाद (उ.प्र.) के ग्राम जैतपुर(सोनावाँ) में हुआ। वर्तमान समय में लखनऊ में रह रहीं डॉ. विद्याविन्दु सिंह उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ में संयुक्त निदेशक पद से सेवानिवृत्त होकर स्वतंत्र लेखन कर रही हैं। वे काशी हिन्दू वि.वि. से पी.एच.डी. डिग्रीधारी हैं तथा अवधी लोकसाहित्य और हाइकु कविता पर उनका महत्वपूर्ण कार्य है। उपन्यास, कहानी, कविता, लोक-साहित्य, नाटक, निबंध, साक्षात्कार, तथा बाल-साहित्य की 121 पुस्तकें प्रकाशित हैं। वे देश-विदेश की लगभग 138 संस्थाओं से सम्मानित / पुरस्कृत हैं।

ईमेल - 45srivatsa@gmail.com

पुजारिन अइया

-डॉ० विद्याविन्दु सिंह

"उनका नाम यमुना था। एक गाँव में उनका एक छोटा सा परिवार था। माँ, पिता और एक छोटा भाई। गाँव में प्लेग की महामारी आयी और यमुना की माँ को अपने साथ ले गयी। उसके पिता जी एकदम टूट गये। यमुना के नन्हें हाथों में गृहस्थी का भार आ पड़ा। वह पिता और भाई दोनों का सहारा भी थी और उनके प्राणों का आधार भी। कितना प्यार मिला उनसे, वह बता नहीं सकती।..."

बाबा निहालदास की कुटिया में एक श्वेत-केशी वृद्धा रहती थीं। ठाकुर जी की पूजा-पाठ के अलावा गाँव के हर सुख-दुख में उनकी भागीदारी थी। कोई नहीं जानता था कि उनका असली नाम क्या था। यहाँ वे कहाँ से आई थीं। यहाँ तो वे पुजारिन अइया के नाम से जानी जाती थीं। पुजारी जी को कुम्भ मेले में वह बीमार अवस्था में असहाय-सी पड़ी मिली थीं। उस बार कुम्भ में एक हाथी के बिगड़ जाने से भगदड़ मच गई थी और तमाम लोग मर गये थे या ज़ख्मी हो गए थे। अपने सामान और साथियों से बिछुड़े लोग ठण्ड में जान बचाने के लिये किसी भी मनुष्य का सहारा मिल जाय, उसी के साथ चल देते थे। जो अपना पता ठिकाना बता सकते थे, वे देर-सबेर अपने घर पहुँचा दिये गये या पहुँच गये थे। पर पुजारिन अइया ने पुजारी जी के बहुत पूछने पर भी अपना ठिकाना नहीं बताया था और इसी कुटिया में शरण ले ली थी। उस सत्य एकाकी वृद्ध पुजारी ने इन्हें अपनी बेटी का स्नेह देकर यहाँ बसा दिया।

एक रिश्तेदार के विवाह उत्सव में शामिल होने के लिए मैं उस गाँव में पहली बार गयी थी और पुजारिन अइया की आँखों में जाने क्या-क्या दिखा था, वात्सल्य, ममता के साथ संकल्प की एक ज्योति और साथ ही एक शून्य भी, शादी की भीड़-भाड़ में वे सबके साथ होते हुए भी अलग-अलग दिखती थीं। शुभ्र परिधान, श्वेत केश, गले में तुलसी की माला।

गर्मी की दुपहर में जब विवाह उत्सव की थकान से लोग आराम कर रहे थे, मेरा मन पुजारिन अइया में उलझ गया था। मैं उनकी कुटिया में पहुँच गयी। मैंने उनका विगत जानने की इच्छा व्यक्त की तो वे उदास हो गयीं- "क्या करोगी बिटिया...? जो बीत गया उसे याद करने से क्या फायदा?"

मैं बोल पड़ी "नहीं, बताइए न ... मुझे बड़ी जिज्ञासा है।"

पुजारिन अइया ने जो कुछ सुनाया, वह एक सत्य था जो उनकी कहानी के रूप में दे रही हूँ।

उनका नाम यमुना था। एक गाँव में उनका एक छोटा सा परिवार था। माँ, पिता और एक छोटा भाई। गाँव में प्लेग की महामारी आयी और यमुना की माँ को अपने साथ ले गयी। उसके पिता जी एकदम टूट गये। यमुना के नन्हें हाथों में गृहस्थी का भार आ पड़ा। वह पिता और भाई दोनों का सहारा भी थी और उनके प्राणों का आधार भी। कितना प्यार मिला उनसे, वह बता नहीं सकती। पिता उसके विवाह के लिए चिन्तित थे और वह चिन्तित थी कि मेरे इस घर से जाने के बाद इन दोनों को कौन सँभालेगा। भाई-बहन दोनों ही रात को सोते में लिहाफ फेंक देते थे। माँ रातभर जाग-जाग कर उन्हें रजाई ओढ़ाती थी। यमुना भी अब भाई को रात में जागकर ओढ़ाती। पिता जी दो रोटी खाकर 'बस, और नहीं, और नहीं...' करने लगते थे। माँ की तरह ही उनको बातों में लगाकर मना करते-करते भी यमुना उन्हें तीन-चार फुलके और खिला देती थी। कैसे वह माँ की सारी भूमिकाएँ निभाने लगी थी, उसे पता नहीं लगा था।

एक दिन यमुना के पिता जी बाहर गये और दो दिन दो रातें बीत गईं। वापस नहीं लौटे। यमुना छोटे भाई को साथ लेकर गाँव भर में दरवाजे-दरवाजे दौड़ती- रोती गई-

"मेरे पिता जी को ढूँढ़िए, आप लोग कुछ करिए।"... सहानुभूति तो सभी ने दिखायी पर उन्हें ढूँढ़ने जाने का साहस किसी ने नहीं दिखाया। लोग दबी ज़बान से बोलते-

"जानती हो बिटिया, हम लोग बाल-बच्चे वाले हैं, तुम्हारे पिता जी का साथ क्रांतिकारियों से है। अँग्रेज सरकार हमारे घर फुँकवा देगी, हमें मरवा देगी।'

उस दिन यमुना को लग रहा था कि वह अकेली है। भाई का हाथ पकड़ कर वह थाने पहुँची थी। रोयी गिड़गिड़ायी कि मेरे पिता जी को ढूँढने में सरकार मदद करे। पर वहाँ सिपाहियों की घूरती आँखों को देखकर पहली बार आदमी से उसे डर लगा था। वह भाई का हाथ पकड़ कर वापस भाग आयी थी। उनके कहकहे दूर तक उसका पीछा करते रहे। पाँच दिन बाद उसके पिता की सड़ी हुई लाश गाँव के बाहर नाले में पड़ी मिली। वह निस्तब्ध पथराई-सी खड़ी रह गयी थी। जब पिता को मुखाग्नि देने के लिए उसके छोटे भाई को बुलाया गया तो वह भय से चीख कर हाथ की आग फेंककर बहन के पास भाग आया था। यमुना कलेजे पर पत्थर रखकर उसे अपने साथ लेकर चिता तक गयी और उसका हाथ पकड़कर मुखाग्नि दिला दी।

वह छोटे भाई को लेकर रह रही थी। गाँव वालों ने नाता तोड़ लिया था, भय के कारण, क्योंकि उसके पिता पुलिस की गोली के शिकार हुए थे। उनका अपराध यही था कि वे जंगल में छिपे क्रान्तिकारियों को खाना पहुँचाने जा रहे थे। उस दिन उसके पिता ने जल्दी-जल्दी ढेर सारी रोटियाँ यमुना के साथ मिलकर सिकवायीं थीं। पंजीरी, भुने आलू, अचार, गुड़ जल्दी-जल्दी झोले में भरा था और जाते हुए बोले थे-

"बेटी यमुना! दरवाजा भीतर से बन्द कर लेना, मुझे लौटने में देर हो जायेगी। किसी को बताना नहीं कि मैं खाना लेकर कहीं गया हूँ ।"

यही उनका अन्तिम वाक्य था। यमुना नहीं जानती थी कि वह उनका जाना फिर कभी न लौटने के लिए है । वह आज भी सोचती है तो कलेजा फटने लगता है।

यमुना ने इण्टर की परीक्षा दे दी थी। पिता उसकी प्रतिभा देखकर उसे उच्च्य शिक्षा दिलाना चाहते थे, पर अब कौन था सोचने-करने वाला। वह किसी तरह अपने खेतों को अधिया पर देकर खेती करा रही थी। उम्मीद थी कि भाई बड़ा हो जायेगा तो खेती सँभाल लेगा। उसकी गृहस्थी बसा देगी और वह मुक्त हो जायेगी। पर कहा गया है कि "मेरे मन कुछ है, दाता के कुछ और।" विधाता कुछ और ही रच रहा था।

चारों ओर क्रान्ति का बिगुल बज उठा था। एक ओर 'वन्दे मातरम्, भारत माता की जय' के नारे थे तो दूसरी ओर मारो-काटो फूँक दो का शोर था। भाई सो गया था। यमुना रसोई का काम निपटा कर सोने जा रही थी, आस-पास सन्नाटा था। लोग शाम से ही किवाड़ बन्द कर लेते थे। तभी खुट्-खुट-खुट्... दरवाजे की कुण्डी खटकी। यमुना सोचने लगी कि कौन हो सकता है? गाँव वालों ने तो भय के कारण नाता ही तोड़ लिया था, पर एक वृद्ध बाबा कभी-कभी रात के अँधेरे में चुपके से हाल-चाल लेने आ जाते थे । सोचा, वही होंगे।

यमुना ने धीरे से द्वार खोल दिये। हवा का तेज झोंका कोठरी में घुस आया। साथ ही काले कम्बल में लिपटी एक मानव आकृति भी कोठरी में घुस आयी। हवा के झोंके से दिया बुझ गया। अँधेरे में यमुना कुछ समझती, बोलती उसके पहले ही एक हाथ से दरवाजा बन्द करते हुए वह मानव आकृति खड़े होकर फुसफुसाई... "मैं चोर नहीं हूँ... घबराइये नहीं... मैं क्रान्तिकारी हूँ। अँग्रेज पुलिस मेरे पीछे लगी है। आप बैठिए... मैं समझाता हूँ कि आपको क्या करना है।

यमुना ने टटोल कर ढिबरी जलायी और उसके मंद प्रकाश में देखा, एक गौरांग लम्बा युवक कम्बल उतार कर खड़ा है। उसके पाँव से खून बह रहा है। घुटने के ऊपर गोली लगी थी। अठारह वर्ष की यमुना की जगह कोई दूसरी लड़की होती तो भय से चीख उठती और एक अनजान युवक को अकेले कमरे में पाकर भय से काँप रही होती। पर यमुना एक क्रान्तिकारी की बेटी थी। बचपन से पिता ने गीता, रामायण, महाभारत के आख्यान सुनाकर उसे अभय का संस्कार दिया था। क्रान्तिकारियों के लिये मन में आदर-सम्मान था, वही उसे निश्चिन्त कर रहा था।

यमुना ने युवक को बिस्तर पर बैठने के लिये कहा। चूल्हा जलाकर पानी गरम करने के लिए जाने लगी। युवक के चेहरे पर पीड़ा के चिह्न थे, पर वह मुस्कुराने की कोशिश कर रहा था। यमुना ने देखा कुरता और पाजामा खून से तर हो रहा था। युवक अभी हाँफ रहा था, पर रुक-रुककर अत्यन्त धीरे-धीरे कहने लगा-

"यमुना ने धीरे से द्वार खोल दिये। हवा का तेज झोंका कोठरी में घुस आया। साथ ही काले कम्बल में लिपटी एक मानव आकृति भी कोठरी में घुस आयी। हवा के झोंके से दिया बुझ गया। अँधेरे में यमुना कुछ समझती, बोलती उसके पहले ही एक हाथ से दरवाजा बन्द करते हुए वह मानव आकृति खड़े होकर फुसफुसाई... "मैं चोर नहीं हूँ... घबराइये नहीं... मैं क्रान्तिकारी हूँ। अँग्रेज पुलिस मेरे पीछे लगी है। "

"पहले मेरी बात सुनिए... पुलिस मेरे पीछे है, मैं किसी तरह छुपकर आ गया हूँ। पर सवेरा होते ही खून का निशान देखते-देखते यहाँ तक आ पहुँचेगी। इसलिए सवेरा होने से पहले ही ये निशान मिटाने होंगे। मुझे गोली लगी है और बुखार भी है। मेरी हालत ऐसी नहीं है कि मैं बाहर निकल सकूँ।

मुझे आपके घर में तब तक शरण लेनी पड़ेगी जब तक मेरा घाव पुर नहीं जाता। क्योंकि मुझे गोली लगने का अन्दाज़ उन्हें हो गया है। वे हर घायल आदमी पर सन्देह कर रहे होंगे। गोली लगते ही मेरी आह उन्होंने सुन ली थी। मैं भाग कर उसी बाग में भड़भूजे के भाड़ में छिप गया था। लगता है भाड़ बहुत दिनों से जला नही था क्योंकि उसके चारों ओर झाड़-झंखाड़ उग आये थे। इसलिए वे लोग मुझे वहाँ ढूँढ़ने नहीं गये।" -कहते-कहते वह रुक गया, उसने पानी माँगा ।

यमुना पानी ले आयी। घाव धोना पहले जरूरी था। नहीं तो जहर फैल जाएगा, यह बात वह जानती थी।

यमुना ने कहा, आप अभी चुप रहिए, पानी पीकर हाथ-मुँह धो लीजिए, कुछ खा लीजिए तब बातें करिए।

युवक ने उसकी ओर भरपूर निगाहों से देखा-आपको मुझसे डर नहीं लगा? यमुना ने सिर झुका लिया। 'आप इतनी तकलीफ उठा रहे हैं देश के लिए। आप बुरे आदमी हो ही नहीं सकते, यह मेरा विश्वास है। इस समय आप और बात न करिये... ।' यह कहकर वह उबला पानी लेने भीतर गयी। छोटा भाई निश्चिन्त प्रगाढ़ निद्रा में सो रहा था। सोचा छोटा ही सही पर मेरा भाई घर में हैं। मैं अकेली नहीं हूँ। वैसे जाने क्या बात है इस युवक में कि अपरिचित होते हुए भी मुझे इससे डर नहीं लग रहा है। बल्कि सहानुभूति हो रही है। क्या यह पिता जी के बलिदान के कारण है। जब से पिता जी अँग्रेज पुलिस का शिकार हुए, अँग्रेजों के प्रति अपार घृणा से उसका मन सुलगता रहा। छोटे भाई की रक्षा का भार न होता तो वह बदला लेकर रहती, भले ही प्राण गँवाने पड़ते। पर उसके अपने प्राणों की रक्षा अपने भाई के लिए जरूरी थी। 'उसे किसके भरोसे छोड़ती? उसका विवाह कर दूँ... वह अपनी गृहस्थी सँभाल ले तो मैं भी क्रान्तिकारियों में शामिल हो जाऊँ।' वह सोचती रहती।

पानी उबल गया था। आगन्तुक के लिये उसने दूध गरम करने को चढ़ा दिया। गरम पानी हाथ-मुँह धोने के लिए दिया और अपने हाथों से घाव साफ करने के लिये उद्धत हुई पर उसने मना कर दिया। स्वयं घाव साफ करने लगा। यमुना

ने देखा, गोली जाँघ को गहराई से छीलती हुई निकल गयी थी, माँस झूल गया था।
घाव साफ करके हाथ-मुँह धोकर आया तो उसे, पिता के धुले हुये कपडे पहनने को देते हुए उसका मन भर आया। उन कपड़ों में उसे देखकर यमुना को लगा कि जैसे कोई उसका अभिभावक घर में आ गया है। मना करने पर भी यमुना ने उसे जिद करके दूध पीने को दिया। खाना खाने को उसने मना कर दिया। भीतर की कोठरी में उसका बिस्तर लगाकर यमुना ने उसे सोने के लिये भेज दिया। वह थका तो था ही, निढाल होकर सो गया।
अब यमुना तेजी से सोचने लगी, यहाँ गाँव में तो भोर में ही लोग जागकर दिशा-मैदान जाने लगते हैं। सुबह वह खून के निशान मिटाने निकलेगी तो लोग देखेंगे। अँधेरा तब भी रहेगा और अब भी है। अभी अगर किसी ने देखा भी तो बहाना कर देगी कि गाय ने खूँटा तुड़ा लिया था। लेकिन अकेले निकलना ठीक नहीं। भाई को जगाकर सारी बात बताना जरूरी है, नहीं तो वह घर में अपरिचित को देखकर कहीं चिल्ला पड़ा तो पड़ोस के घर को भनक लग जायेगी और लोग जाने क्या-क्या बातें करने लगेंगे। इतना सोचते ही वह संकोच से भर उठी। यह तो उसने सोचा ही नहीं था, यदि किसी को पता चल गया कि यमुना ने एक जवान आदमी को अपने घर में रात भर रखा, तो क्या सोचेंगे लोग। पर यह वक्त, यह सब सोचने का नहीं था।
यमुना ने भाई को धीरे से जगाया। वह आँखें मलता भौंचक्का-सा बैठ गया। यमुना ने उससे कहा, 'देख रतन, हमारे घर में एक क्रान्तिकारी आये हैं। इन्हें गोली लगी है, पुलिस इनके पीछे पड़ी है। अगर कोई पूछे तो बताना नहीं। घर की तलाशी ली जाये तो कह देना कि मेरी दीदी को गिल्टी निकल आई है, बुखार है, भीतर लेटी है। रतन बोला- दीदी! तुम्हारे गिल्टी निकलने की बात क्यों कही जाय? यह तो झूठ होगा।
यमुना हँस पड़ी। "हाँ भइया! झूठ तो है, पर किसी के प्राण बचाने के लिए झूठ बोलना पाप नहीं है। अगर तुम केवल मेरे अन्दर लेटने की बात बताओगे तो पुलिस भीतर तक आकर मुझे उठाकर तलाशी लेगी, और ये बेचारे पकड़ लिये जायेंगे। निर्दयी पुलिस इन्हें भी मार डालेगी जैसे कि हमारे पिताजी को मार डाला गया था।" कहते-कहते उसका गला भर आया। भाई ने बहन का हाथ पकड़ लिया, उसकी पकड़ में एक दृढ़ता थी। 'दीदी मैं सब समझ गया। तुम चिन्ता न करो।'
अब यमुना ने भाई को रक्त के निशान साफ करने वाली योजना बतायी। वह बहन के साथ टार्च लेकर निकला। कोई शक न करे, इसलिए दिखाने के लिए गाय की रस्सी खूँटे से खोलकर हाथ में ले ली। टार्च की रोशनी में खून के धब्बे और गोबर के दाग सब एक रंग के लग रहे थे। यमुना ने बड़ी सावधानी से मिट्टी खुरच-खुरच कर भूमि बराबर कर दी जिससे खुरचे होने का शक न रहे। एक बार मन में आया कि पूरा हाता लीप डालूँ पर सोचा कि इससे तो शक और बढ़ जायेगा। वह अपने हाते के बाहर रास्ते पर भी सब साफ कर आयी।
भाई गाय को पहले दूर तक ले गया फिर वापस लौटते समय दोनों भाई-बहन पैर से धूल डाल-डालकर जहाँ भी शक हुआ खून के निशान मिटाते आये।
सुबह हो गई तो फिर लोटा लेकर बारी-बारी से भाई-बहन जंगल की ओर गये और जब आश्वस्त

हो गये कि कोई भी निशान नहीं बचा तब नहा-धोकर यमुना ने खाना बनाया।

युवक जाग गया था, उसकी पीड़ा कम हो गयी थी। यमुना ने हल्दी, प्याज तेल में गरम करके बाँध दिया था। सुबह फिर पट्टी खोलकर साफ करके अपनी पुरानी धुली साड़ी फाड़कर बाँध दी। युवक ने खाना खाने से मना कर दिया, क्योंकि समस्या थी दिशा-मैदान जाने के लिए बाहर निकलने की। भाई ने यह जिम्मा लेना चाहा कि मै सफाई कर दूँगा, पर युवक ने दृढ़ता से मना कर दिया।

यमुना का मन भी नहीं हुआ कि कुछ खाये। घर में एक व्यक्ति भूखा पड़ा है तो कैसे मुँह में दाना जा सकता है। वह भी बिना खाये पड़ी रही। दूध उसे जबरदस्ती पिला दिया और खुद भी गुड़ खाकर पानी पीकर रह गयी। जाड़े का दिन तो बिना खाये कट जाता है पर पेट में दाना न हो तो रात काटे नहीं कटती ।

दूसरी रात किसी तरह भाई जिद करके पिछवाड़े की झाड़ियों में उसे लेकर गया और रात में युवक ने स्नान कर भोजन किया तथा लेट गया। उसे बहुत खराब लग रहा था, इस तरह कायरों की तरह रहना पर इस परिवार पर कोई विपत्ति न आये इसलिए वह विवश था।

युवक का नाम नारायण था। वह यमुना के पिता के साथ बहुत पहले काम कर चुका था। तब उसे रातोंरात पोस्टर चिपकाने का काम दिया जाता था। एक बार यमुना के पिता ने, जो मास्टर के नाम से जाने जाते थे, उसे अपने घर का पता बताया कि पोस्टर मेरे घर से ले आना। वह रात के अँधेरे में पोस्टर लेने यहाँ आया था और यमुना के पिता ने बाहर ले जाकर बण्डल उसे दे किया था । वह बहुत दुखी हुआ था जब मास्टर साहब की मृत्यु का समाचार उसे मिला था। पर इस भय से संवेदना प्रकट करने नहीं आ सका था कि कहीं पुलिस को संदेह न हो जाय। अभी उसे कई बड़े काम करने थे। अभी वह मरना या बन्दी हो जाना नहीं चाहता था ।

नियति ने आज उसे मास्टर साहब के घर का शरणार्थी बना दिया था।

इतनी सावधानी के बाद भी जाने कैसे पुलिस को भनक पड़ गयी कि यमुना के घर में कोई छुपा हुआ है। आज सुबह जब उसने पट्टी खोली तो घाव अभी भी गहरा था और वह चल पाने में कष्ट का अनुभव कर रहा था। वह जल्दी से जल्दी वहाँ से भाग जाना चाहता था क्योंकि इस घर वालों को किसी मुसीबत में वह नहीं डालना चाहता था। लेकिन यमुना और रतन ने उसे जाने नहीं दिया। 'घाव ठीक हो जाये तभी आप जा सकते हैं। कहकर दोनों ने उसकी एक नहीं सुनी थी।

आज युवक को आये तीसरा दिन था। रात के ग्यारह बज रहे थे। जीप की आवाज और तेज लाइट से तीनो के कान चौकन्ने हो गये। दरवाजे के बाहर पुलिस के बूटों की आवाज चरर-मरर सुनायी दी। रतन-यमुना ने एक दूसरे की ओर देखा। योजना पहले ही बन चुकी थी। खट्-खट्-खट् बूटों की ठोकरें दरवाजे पर पड़ीं। रतन ने अलसाये, नींद से जगे भौचक्के की तरह जाकर किवाड़ खोल दिये क्योंकि देर करके पुलिस के संशय को नहीं बढ़ाना था।

एक सिपाही ने कोठरी में टार्च की रोशनी डालते हुए डपट कर पूछा "क्यों छोकरे ! कहाँ छिपा रखा है बदमाश को?"

रतन ने बिना घबराये कहा- "कौन बदमाश ?... हमारे यहाँ तो कोई नहीं आया। मैं हूँ, मेरी दीदी है। तेज बुखार है दीदी को गिल्टी निकल आयी

है, वह अभी-अभी सोयी है।

सिपाही ने भीतर की कोठरी, बरामदा, आँगन सब जगह झाँक-झाँककर टार्च की रोशनी में देख डाले, फिर लौटकर दूसरे सिपाही से बोला- “उस कमरे में लड़की सो रही है, वहाँ भी भीतर तक देख आओ। मैं इधर पिछवाड़े देखता हूँ।

दूसरा सिपाही भुनभुनाता हुआ कोठरी की ओर गया, उसने दरवाजे से ही चारपाई पर टार्च की रोशनी फेंकी। रतन का कलेजा मुँह को आ गया। “दीवान जी ! हाथ जोड़ता हूँ, अभी-अभी दीदी को किसी तरह नींद आयी है, दर्द से बेहाल थी। मेरी बात का विश्वास करें, हमारे यहाँ और कोई नहीं है।

सिपाही पहले से ही नकिया रहा था। प्लेग की गिल्टी की मरीज के कमरे में जाना उसे नागवार लगा था। पर मजबूरी थी, उससे सीनियर सिपाही का निर्देश था, जो इतना धाकड़ था कि अफसर लोग भी उसका अदब करते थे। वह जल्दी ही इंस्पेक्टर बनने वाला था। इसलिए मन मारकर कोठरी के दरवाजे से ही वह पूरी कोठरी में टार्च फेंक रहा था। उस कोठरी में कोई ऐसा सामान भी नहीं था कि कोई छिप जाता। टार्च की रोशनी में एक सुन्दर युवती का सोता हुआ सुन्दर चेहरा उसे दिखाई दिया। “काश ! उस चेहरे को नजदीक से देखता, छूता, उसे हाथ पकड़कर उठाता, धमकाता... पर मरी प्लेग की बीमारी... अरे जान है तो जहान है।” बुदबुदाता हुआ वह कोठरी से बाहर आ गया ।

बाहर आकर बोला- “भीतर तो केवल एक लड़की सोयी हुई है भई, पूरी कोठरी में देख आया हूँ।

पुलिस, सूचना देने वाले मुखबिर को ही कोसती, गाली देती, धमकाती वापस लौट गयी थी। अँग्रेज अफसरों से भीतर ही भीतर घृणा करने वाले ये हिन्दुस्तानी सिपाही अपने ही भाइयों के दुश्मन हो गये थे। पैसे के लोभ ने, दण्ड और भय ने उनका ज़मीर ही उनसे छीन लिया था।

भाई ने भीतर से सिटकनी लगा ली। उसे ताज्जुब हो रहा था कि दीदी ने उस युवक को कहाँ छिपाया? वह मुड़ा, दीदी उसके पीछे खड़ी थी और कोठरी के दरवाजे पर युवक कृतज्ञ निगाहों से रतन और यमुना को देख रहा था। लेकिन कल फिर पुलिस आयेगी, क्योंकि वह मुखबिर चैन से नहीं बैठेगा।

भाई को नींद नहीं आ रही थी। यह उमर ही थी अल्हड़, लापरवाह बैठकर सोचने-सुनने की नहीं। दीदी सोचेगी और करेगी जो भी करना होगा। नारायण भी जाकर चारपाई पर लेट गया। उसे कमजोरी के कारण चक्कर आ रहा था। यमुना ने दूध गरम करके उसे दिया और उसका माथा सहलाने लगी। युवक ने अपने कृतज्ञ हाथों से अपने माथे पर रखे हुये उसके हाथ थाम लिये। उसकी आँखें गीली हो गयीं।

रात के एकान्त में एक युवती एक युवक परस्पर सहानुभूति के नैसर्गिक भाव में डूबे एक दूसरे से स्पर्श की ऊष्मा का अनुभव कर रहे थे। यमुना के हाथ उसकी आँखों का गीलापन पोंछते हुए विह्वल हो उठे। अचानक भावावेश में युवक ने उसके हाथों को अपने सुलगते हुए अधरों पर रख लिया। युवती भी भाव विह्वल थी। न जाने कल की सुबह नारायण के जीवन को किस अँधेरे की ओर ले जायेगी। उसकी इच्छा हुई कि इस रात को वह उसे अपना समस्त प्यार देकर अविस्मरणीय बना दे। वह अकेला नहीं है, मैं भी उसके साथ हूँ, यह उसे अनुभव करा दे। उसने झुककर उसके माथे पर अपने अधर रख दिये। जैसा कि अपने छोटे भाई की अस्वस्थता में उसे सांत्वना देने

के लिए करती थी। स्पर्श मौन प्यार की सबसे सशक्त भाषा है, उसने कहीं पढ़ा था। वह सोच रही थी, अपने माँ-बाप का यह भी लाडला होगा और आज इस तरह देश के लिये स्वयं को संकट में डाल कर दर-दर भटक रहा है, कष्ट उठा रहा है। वह क्रान्तिकारियों की वीरता की घटनाएँ सुनकर रोमांचित हो जाया करती थी।

आज एक युवक क्रान्तिकारी उसके इतना निकट है। निकट की याद आते ही उसे याद आयी कुछ क्षण पहले की घटना जो कि एक आश्चर्य थी। कैसे उसके दिमाग ने काम किया और सिपाही की तलाशी की आशंका में यमुना युवक के पूरे शरीर के ऊपर पसर कर उसे छिपाने के लिए लेट गयी। लिहाफ के नीचे दो हृदय एक साथ धड़क रहे थे, पर उस समय केवल प्राण रक्षा का विचार मन में था और कोई भाव मन में नहीं था।

माथे पर अधर रखते ही उस स्थिति का स्मरण जब यमुना को हुआ तो वह संकोच से गड़ गयी। उसके शरीर में लाज की विचित्र सिहरन उठी। ठीक उसी समय युवक की दो आकुल बाहों ने उसे भर लिया। उसे जाने क्या हुआ, यमुना का शरीर और मन अवश हो उठा, लगा कि दोनों जन्म-जन्मान्तर से एक दूसरे की प्रतीक्षा में थे, एक दूसरे के लिए ही बने थे, परिणामतः कल विस्मृत हो गया। वह क्षण जीवन का अमृत था या विष इसकी चिन्ता से परे दोनों एक-दूसरे में खो गये थे। आत्मा-परमात्मा के रूप में राधा-कृष्ण के प्रेम की व्याख्या पिताजी करते थे। यमुना का मन राधा हो गया, तन घनश्याम हो गया। उसे लगा कि वह 'गीत गोविन्द' की राधा है जो कि श्री कृष्ण को सँभाल कर उनके घर पहुँचाने के लिए चल पड़ी है। बीच में वृन्दावन में श्रीकृष्ण बड़े हो गये हैं, उसके साथ रास रचा रहे हैं। पिताजी द्वारा पढ़ाया गया गीत गोविन्द आज आँखों में उतर आया था।

दोनों इस अविस्मरणीय रात को सोकर खोना नहीं चाह रहे थे। काश! यह रात न बीतती क्योंकि इसके बीतते ही यमुना के दिन स्याह होने की आशंका थी। लेकिन यमुना को अपने से अधिक अपने इस अनायास मिले प्रिय जीवन की चिन्ता थी। जिसे कलेजे पर पत्थर रखकर आज की रात में ही विदा कर देना था। भय और आशंकाओं से घिरी होने पर भी यह रात कितनी तेजी से सरकती जा रही थी।

यमुना ने रतन को जगाया। उसे समझा कर बाहर भेजा कि जाओ देख आओ कि बाहर कोई है तो नहीं। वह देखकर लौट आया, कोई नहीं था। यमुना ने भाई से कहा कि इन्हें साइकिल पर बैठाकर स्टेशन तक पहुँचा आओ। नारायण ने चलते समय यमुना को आश्वासन दिया- "यदि जीवित बच गया तो निश्चित रूप से आऊँगा और विधिवत रूप से तुम्हें यहाँ से ले चलूँगा।" रतन को गले लगाकर वह बोला "रतन! तुम्हारी दीदी अब तुम्हारे पास मेरी धरोहर है, इनका ध्यान रखना। मैं जरूर आऊँगा। अभी सीधे अपने घर जाने में खतरा है। कुछ समय लग जायेगा, घबड़ाना नहीं।"

यमुना ने अपने पास जोड़कर रखी हुई सारी पूँजी उसे सौंपते हुये कहा-मेरे नेह की सौगन्ध, इसे ले लो, देखो मना न करना। ये तुम्हारे काम आयेंगे तो मैं समझूँगी कि देश के काम आये। पिताजी ने अपना जीवन देश को दे दिया। तुम प्राण हथेली पर लिये घूम रहे हो। मैं तो कुछ न कर सकी। तुम्हें अपना सर्वस्व देकर यह अनुभव करना ही मेरे लिए सुखकर है कि मैंने भी इस क्रान्ति की ज्वाला में एक आहुति दी है।

रतन, नारायण को लेकर खेतों की मेड़-मेड़ जा रहा था। अचानक गाँव के सिवान पर पहुँचते ही, चार लोगों ने दोनों का दौड़कर दबोच लिया। उस मुखबिर ने अपनी बात झूठी होती देखकर रात में ही दाँत पीस लिये थे। उसने पुलिस वालों को बगल के घर की दलान में सुला दिया था। वह खुद रतन के दरवाजे के सामने रखे पुआल के ढेर में छिपकर बैठ गया था। जैसे ही रतन बाहर निकल कर चारों ओर देखने लगा, वह चौकन्ना होकर बैठ गया। जब रतन, नारायण को लेकर निकला तो वह पुलिस वालों को लेकर पीछा करने लगा और उन्हें दबोच लिया।

एक सिपाही ने रतन को एक ओर धक्का देकर गिरा दिया। 'क्यों रे छोरे! तू तो कह रहा था कि तेरे यहाँ कोई नहीं है?... आज किसको बैठाकर तू ले जा रहा है, यह तेरा बाप है कि तेरी बहन का भतार ...'

रतन की आँखों में खून उतर आया, उसने असावधान सिपाही को धक्का देकर गिरा दिया। उधर दो सिपाही और मुखबिर नारायण पर टूट पड़े- "बोल! अपने साथियों का नाम पता बता दे, तो तेरी जान छोड़ दी जायेगी, वरना तुम्हें बूटों के नीचे रौंद-रौदकर मार डालेंगे।" नारायण ने जुबान नहीं खोली, लग रहा था कि उसके मुख में जीभ है ही नहीं। वह घायल अवस्था में ही तीन-तीन शैतानों से जूझता, उनके अपशब्द झेल रहा था। रतन के धक्के से गिरे हुए सिपाही ने उठकर दुबारा रतन को दबोच लिया था। युवक उसे बचाने के लिए दौड़ा। सिपाही रतन का गला दबा रहा था। 'पिल्ले, सिपाही को मारेगा? जा तेरे बाप के पास तुझे भी पहुँचाता हूँ।'

अपने को सिपाही की गिरफ्त से छुड़ाकर किसी तरह नारायण वहाँ तक पहुँचा। तब तक रतन

"देश आजाद हो चुका था। उसे अब न क्रान्तिकारियों की आवश्यकता थी और न बलिदानियों के सर्वहारा परिवार की चिन्ता करने की आवश्यकता थी। यमुना सोचा करती थी कि कुर्सियों पर बैठे लोग भले ही उसे भूल जायें पर मैं कैसे भूल सकती हूँ। अपने पिता, भाई और प्रिय को। उसकी इच्छा हुई कि वह अपने गाँव जाये, वहाँ उस भूमि को प्रणाम करे जहाँ वे शहीद हुए थे। उस कोठरी को भर आँख एक बार देखे जहाँ उसका अपने प्रिय से प्रथम और अन्तिम मिलन हुआ था।

की आँखें फट चुकी थीं। वह दम तोड़ चुका था। वह बदहवास-सा रतन की लाश को सीने से चिपकाकर उसके घर की ओर दौड़ने लगा। 'रतन! तुम्हारी दीदी का गुनहगार हूँ। मैं तेरे हत्यारे को अब नहीं छोड़ूँगा। हाय रतन ! मेरे कारण तेरी जान गई।' वह विक्षिप्त सा हो गया। सिपाहियों ने हत्या के इस प्रत्यक्षदर्शी को जीवित छोड़ना खतरे से खाली नहीं समझा। मृतक लड़का नाबालिग था और निर्दोष भी। कानूनन हत्यारे के बचाव का कोई उपाय नहीं था।

चारों लोगों ने घायल, आहत, दुखी नारायण को चारों ओर से दबोच लिया और उसे बूटों और घूसों से मारते रहे। खेत की मेड़ पर उसका सिर पटकते

रहे। उसका घाव खुल गया था। तेज रक्तस्राव होने लगा था। हत्यारों ने तब तक उसे नहीं छोड़ा जब तक उसके प्राण निकल नहीं गये।
गेहूँ के खेतों में भारत के दो नौनिहालों की मिट्टी पड़ी थी। इसी धरती पर जन्मे चारों हत्यारे वहाँ से भाग गये थे।
उजाला होते ही गाँव के लोग दिशा मैदान को गये तो गेहूँ के रौंदे हुए खेत दूर से ही दिखाई दिये। लोग पास पहुँचे तो रतन की लाश पहचानी गयी और गाँव में हा-हाकार मच गया। युवक की लाश के बारे में लोग कानाफूसी कर रहे थे।
यमुना, भाई के लौट आने की प्रतीक्षा में व्याकुल थी कि सही सलामत नारायण को स्टेशन तक पहुँचा कर लौट आये। उसकी दुश्चिन्ता दोनों के लिए थी। कहीं पुलिस न पकड़ ले। गुजरी रात एक ओर दुश्चिन्ता में तो दूसरी ओर मिलन पर्व के रूप में बीती थी। उसका तन-मन विचित्र अवसन्न स्थिति में था। दुख की मिठास और सुख की खातिर की पीर दोनों अनुभवों ने उसे हतबुद्धि कर दिया था। दिन निकल आया पर वह दोनों को विदा करके जैसे बैठी थी वैसी ही बैठी रह गयी थी। अचानक यह क्या हो गया? जीवन का कैसा यह अनुभव था, उचित और अनुचित के अन्तर्द्वन्दव और भय से जकड़ी वह चुप बैठी सोचती जा रही थी। पूरी देह आलस से अवसन्न थी ।
इतने में दरवाजे पर शोर सुनकर वह हड़बड़ाकर उठी। दरवाजे पर भीड़ थी और उस भीड़ में था यमुना के जीवन का सर्वनाशी दृश्य। वह पछाड़ खाकर दोनों मृत देहों के ऊपर भरभरा पड़ी और अचेत हो गयी।
गाँव वाले जो सहानुभूति रखते हुए भी भय के कारण साथ नहीं दे रहे थे, आज सब की आँखों में आँसू और खून उतर आया था। अपनी कायरता पर अधिकांश लज्जित हो रहे थे। यदि गाँव वाले साथ देते तो आज यह दुष्परिणाम न होता। क्रान्ति की ज्वाला पूरे देश में भड़क उठी थी। लोग प्राणों की बाजी लगा रहे हैं... और हम कायरों की भाँति घर में छिपे बैठे हैं। अपनों में से ही... लोग मुखबिरी कर रहे हैं। अपने ही निरीह भाइयों के प्राण ले रहे हैं. पर अब कुछ नहीं हो सकता था। मास्टर साहब का वंश डूब गया था। कैसा भोला-भोला था रतन। कैसी दुखी है बेचारी यमुना।
दोपहर से पुलिस आ गयी, पंचनामा लिखा गया। अचेत यमुना को लाशों के ऊपर से हटाकर होश में लाने की कोशिश की गयी लाशें पुलिस के कब्जे में हो गयीं।
यमुना के मुँह पर पानी की छींटे डाली गयीं। उसे होश आया तो विक्षिप्तों की तरह वह पुलिस की गाड़ी के पीछे भागी और फिर गिर कर अचेत हो गयी।
गाँव वालों ने यमुना की पूरी तरह देखभाल की। वह एक महीने तक बिस्तर पर पड़ी रही। गाँव के वैद जी के यहाँ से दवाइयाँ आती थीं, पर यमुना की जीने की इच्छा ही समाप्त हो चुकी थी। किसके लिए जिये वह।
जानवर और खेती-बारी गाँव वालों के भरोसे हो गयी थी। पट्टीदार लोग अपना सम्बंध जोड़ने लगे थे। इस लड़की के बाद खेती-बारी, घर आदि सब किसे मिलेगा? इसकी अटकलें लगने लगी थीं। यमुना की सेवा के लिए होड़ लग गई थी। आपस में लोग लड़ने लगे थे।
यमुना इन सब से बेखबर घुली जा रही थी। उसे खेतीबारी की चिन्ता भी नहीं रह गयी थी। डेढ़ महीने बाद यमुना बिस्तर से उठकर चलने-फिरने

लायक हो सकी थी। अभी तक उसे दूध, परवल का जूस, फल ही दिया जा रहा था। पड़ोस की काकी ने उसे जिद करके आज दाल और फुलके खिला दिये। खाते ही उसे उल्टी हो गयी। हालत फिर बिगड़ने लगी। वैद जी ने आकर नाड़ी देखी तो चौंक उठे। सब को वहाँ से बाहर जाने को कहा और अकेले में बोले-

"बेटी, तुम तो माँ बनने वाली हो। मुझसे कुछ मत छिपाना, सच बताना किसने तेरे साथ यह अन्याय किया? मैं उसे तेरे कदमों में डाल दूँगा। या तू कहे तो इस गर्भ को नष्ट करने की दवा दे दूँ।"

"नहीं, बाबा नहीं ! अब मैं जिऊँगी। इस बच्चे को जन्म दूँगी, पालूँगी। यह मेरे बलिदानी की अन्तिम निशानी है।"

गाँव में यह बात फैलते देर नहीं लगी। चारों ओर यमुना की थू थू होने लगी। मास्टर साहब का नाम डुबो दिया इस अभागी ने। कुछ लोग प्रसन्न भी हुए कि चलो इस लज्जा से कहीं मर-खप जाएगी तो रास्ता साफ हो जाएगा। वे लोग तरह-तरह से उसकी भर्त्सना करने लगे। कुछ लोग उसे गर्भ नष्ट कराने के लिए उकसाने, दबाव डालने लगे। यमुना को शंका हुई कि उसे मार डालने की साजिश रची जा रही है।

एक दिन यमुना ने रात के अँधेरे में अपने घर, खेती-बाड़ी, पशु सबसे नाता तोड़ लिया। उसका एक ही लक्ष्य था, अपने बच्चे को सकुशल जन्म देना। वह अपने साथ ले गयी थी केवल अपने प्रेमी का कुरता पाजामा जिस पर बहुत धोने के बाद भी खून के धब्बे बाकी रह गये थे, और लिया था कागज का एक टुकड़ा, जिसे जाते समय नारायण ने यह कहकर थमा दिया था कि अगर मुझे कुछ हो जाये तो मेरी माँ के पास इस पते पर पहुँच जाना। मेरी माँ को पूरी बात बता देना, संकोच न करना। विवाह मण्डप में तुम्हारा वरण नहीं किया तो क्या हुआ? हमारा गन्धर्व विवाह हुआ है। तुम मेरी पत्नी हो।

"माँ! यमुना तुम्हारी बहू है।

-आपका बेटा नारायण"

यमुना ने अपनी जमा पूँजी नारयाण को दे दी थी, वह पोटली खेत में पड़ी रह गई जो सिपाहियों, मुखबिर या गाँव वालों के हाथ लगी, कुछ पता नहीं। उसे किराये का इंतजाम करना था। तभी उसे ध्यान आया कि उसके पिता हर नागपंचमी और नवरात्रि को उसे पाँच रुपए देते थे और सख्त हिदायत थी कि इसे केवल अपने ऊपर खर्च करना। यह कन्या के लिये मेरा दान है। यमुना कहाँ खर्च करती?... वही पैसे एक मटकी में पड़े थे, किराये की समस्या दूर हो गयी।

यमुना नरायण के घर पहुँची। कौतूहलवश उसके साथ गाँव के बच्चे हो लिए थे। घर के भीतर सन्नाटा था। बच्चे उसे घर के भीतर बुलाते चले गये, वह चलती गयी। थकान से चूर, भूखी-प्यासी, दुख के भार से दबी एक क्षीण काया ने चारपाई पर पड़ी दूसरी क्षीण काया के चरण स्पर्श के लिए झुकना चाहा और लुढ़ककर अचेत हो गयी। एक गौरांग युवती ने उसे हिलाया-डुलाया। आगन्तुक स्त्री के हाथ में कागज का एक टुकड़ा था। जिस पर नारायण के हाथ की लिखी एक पंक्ति थी और पता था। उसके झोले में खून के धब्बों वाला एक कुरता पाजामा था। वह चीख उठी- "माँ! यह भइया के कपड़े हैं। यह भइया की चिट्ठी है। चारपाई पर पड़ी वृद्धा उठकर बैठ गयी। यमुना को होश में लाया गया। उसमें बोलने की शक्ति नहीं रह गयी थी। नारायण की बहन ने उसका सिर गोद में लेकर पानी पिलाने की कोशिश की, पर दाँत बैठ गया था।

इसी गाँव में जन्मे एक डॉक्टर शहर के अस्पताल में नियुक्त थे। आज घर आये थे। उन्हें बुलाकर दिखाया गया तो लोगों को पता चला कि आगंतुक स्त्री माँ बनने वाली है। नारायण की माँ को अँधेरे में एक किरण दिखी। वे उठकर खड़ी हो गयीं। जिस दिन से नारायण का एक क्रान्तिकारी मित्र आकर उसकी मृत्यु की सूचना दे गया था, उन्होंने चारपाई पकड़ ली थी। बेटी बाल विधवा थी, पुत्र क्रान्ति की भेंट चढ़ गया। अब जीना किसके लिए?

अब जीवन का कुछ अर्थ है, यह उन्होंने भी अनुभव किया। यमुना की सेवा-सुश्रूषा में माँ बेटी अपना दुख भुलाने की कोशिश करने लगीं। यमुना स्वस्थ होने लगी।

समय पर एक कन्या ने जन्म लिया। यमुना ने बेटी को हृदय से लगा लिया पर नारायण की माँ और बहन का चेहरा बुझ गया। उन्होंने तो कामना की थी कि एक वंशधर होगा। यमुना का उस घर में जितना स्वागत हुआ था, उससे कहीं अधिक अब माँ-बेटी का तिरस्कार होने लगा था। फिर भी यमुना ने रात-दिन मेहनत करके उस घर में अपना स्थान बनाये रखा क्योंकि अपने प्रिय के परिवार के प्रति दायित्व निभाने का उसका संकल्प था। नारायण की माँ ने फिर चारपाई पकड़ ली। पुराना अस्थमा उभर आया था। यमुना ने दिन-रात उसकी सेवा की थी। वे अपने व्यवहार पर लज्जित थीं। एक दिन यमुना के हाथ में अपनी विधवा बेटी का हाथ थमाकर वह भी चल बसीं। यमुना ने नारायण की बहन को माँ का अभाव नहीं खलने दिया। लोगों के विरोध के बाद भी उसने नारायण की बहन का विवाह एक आर्य समाजी युवक से कर दिया। अपनी बेटी को भी यथासम्भव पढ़ाया-लिखाया और सयानी होने पर उसे एक सुपात्र को सौंप दिया।

एक दिन यमुना ने अपने ननद-ननदोई और बेटी-दामाद को बुलाया और बोली- "अब मुझे लग रहा है कि मैंने अपना काम पूरा कर दिया है। तुम लोगों को देने के लिए अब मेरे पास आशीर्वाद बचा है जो सदा तुम्हारे साथ रहेगा। अब बाकी जीवन भजन और तीर्थ यात्रा में बिताना चाहती हूँ।" सभी ने बहुत विनती की पर वे मानी नहीं। घर-खेत, पशु सब कुछ ननद और बेटी दोनों के नाम आधा-आधा लिखवा दिया। किसी को कुछ कहने का मौका न मिले और आपस में दोनों में कोई तनाव न हो, ऐसी उनकी कोशिश थी। आगे उनका कर्म और भाग्य।

यमुना तीर्थयात्रा पर जा रही है अकेले ही, यह जानकर सारा गाँव इकट्ठा हो गया था। वे सब की सुख-दुख की साथी थीं। कई स्वर यमुना ने सुने थे। 'हमें भी साथ लेती चलो... पर यमुना ने दृढ़ता से मना कर दिया था। "अब मेरा साथ मेरे भीतर बैठा ईश्वर ही देगा, अब मेरे लिए कोई चिन्ता न करना ।"...

देश आजाद हो चुका था। उसे अब न क्रान्तिकारियों की आवश्यकता थी और न बलिदानियों के सर्वहारा परिवार की चिन्ता करने की आवश्यकता थी। यमुना सोचा करती थी कि कुर्सियों पर बैठे लोग भले ही उसे भूल जायें पर मैं कैसे भूल सकती हूँ। अपने पिता, भाई और प्रिय को। उसकी इच्छा हुई कि वह अपने गाँव जाये, वहाँ उस भूमि को प्रणाम करे जहाँ वे शहीद हुए थे। उस कोठरी को भर आँख एक बार देखे जहाँ उसका अपने प्रिय से प्रथम और अन्तिम मिलन हुआ था। उन खेतों को, घर-द्वार को जी भर कर निहारे जहाँ उसके पिता और भाई की स्मृतियाँ बिखरी पड़ी थीं।...

यमुना अपने गाँव आयी थी बीस वर्षों के बाद। घर खण्डहर हो चुका था। उसके चारों ओर किसी के गाय-बैल, भैसों की नादें और खूँटे थे। एक जवान लड़का सानी लगा रहा था।
दालान, कोठरी, रसोई सब टूटी दीवालों में बँटे-बँटे थे। ऊपर छाँह नहीं रह गई थी। यही हाल यमुना का था, यही हाल देश का भी था ।
यमुना उन जगहों पर बैठ कर उन्हें छू-छू कर फूट-फूट कर रोती जा रही थी। धीरे-धीरे भीड़ इकट्ठी होती जा रही थी। किशोरी यमुना अब प्रौढ़ा थी। दुखों की मार ने असमय ही उम्र से अधिक बड़ी बना दिया था।
सानी लगाने वाला वह जवान लड़का दौड़ कर अपने पिता को बुला लाया। वह गाँव के सरपंच थे। सरपंच के साथ और भी लोग आ गये थे।
सरपंच ने उसको देखते ही पूछ लिया- “क्या तुम यमुना हो?” वह केवल रोती रही। उसका वर्षों से कर्तव्य और संयम के नीचे रुका बाँध आज फिर टूट गया था।
गाँव वालों ने यमुना को बताया कि पुलिस ने नारायण और रतन का नाम डकैती के केस में दर्ज कर दिया था। उनके हत्यारों को सजा देने के स्थान पर पदोन्नति का पुरस्कार मिला था।
यमुना की जमीन के लिये पट्टीदारों में आपस में मारपीट हुई। दो लोगों की जानें चली गई। सरकार ने वह जमीन जायदाद जब्त कर ली। अब वह गाँव सभा के कब्जे में थी।
यमुना ने सोचा था कि खेत, घर बेचकर पिता, भाई और पति की स्मृति में यहाँ एक विद्यालय और एक धर्मशाला खुलवा देगी। उसके बाद यहाँ से चली जायेगी ।
सरपंच उसे आदर के साथ अपने घर ले गये। आवभगत हुई। लड़का जो सबसे पहले मिला था, अपनी बहू के साथ आकर पैर छूकर खड़ा हो गया।
सरपंच बोले- “यमुना बिटिया ! यही तुम्हारा बेटा है जिसे तुमने गोद लिया है।” यमुना अवाक रह गई, मुख खुला रह गया।
गाँव के सरपंच ने चालबाजी दिखाई थी। जिससे वह हतप्रभ हो गयी थी। सारी जमीन, घर, पोखर सब यमुना ने ‘बजरंगी’ नामक लड़के के नाम लिख दिया था। गोदनामा और अपनी वसीयत तथा उस पर अपना फर्जी हस्ताक्षर देखकर यमुना आवेश में आकर कुछ कहने जा रही थी, तभी उसने देखा कि सरपंच के तीन पहलवान लड़के जो अभी पैर छू-छू कर गये थे, तीन ओर से खड़े हो गये हैं। सरपंच जहरीली मुस्कान के साथ कह रहे थे, “बिटिया इन कागजों पर अपना दस्तखत मान लोगी तो तुम्हारा मायका बना रहेगा। जितने दिन चाहोगी आकर रह जाना। वरना इन बच्चों को मैं नहीं रोक पाऊँगा। यह तुम्हारा घर देख आये हैं। कहीं कुछ खून-खराबा हो गया तो उसकी जिम्मेदार तुम्हीं होगीं। मेरा क्या, मैं तो अब बच्चों को सब सौंप कर तीर्थ करने जा रहा हूँ।”
यमुना की आँखों के आगे अँधेरा छा गया। उसके बाद उस घर का पानी पीने का मन कैसे करता। थोड़ी देर बाद वह उठ कर चल दी।
वही जवान लड़का बैलगाड़ी लेकर आगे खड़ा हो गया- “बुआ ! बैठ जाओ, धूप बड़ी तेज है। स्टेशन तक छोड़ देता हूँ। उसके हाथ में एक पोटली थी, उसे गाड़ी में रखते हुये बोला- ‘अम्मां ने रास्ते के लिए दिया है ।’
गाँव वाले देख रहे थे। यमुना गाड़ी में बैठने से मना कर रही थी, पर सरपंच के तीनों बेटे तीन ओर से खड़े हो गये थे। यमुना बैलगाड़ी में बैठ गयी। उसे अपनी मासूम बेटी और भोले भोले

दामाद की वे कातर आँखें याद आ गयीं, जो उन्हें विदा करते समय बरस रही थीं। यमुना के हाथ आकाश की ओर उठ गये। 'हे ईश्वर ! मेरे बच्चों की रक्षा करना।'

सरपंच के मुछाड़े लड़के ने पूछा- "बुआ, टिकिट कहाँ का कटा दूँ।" यमुना ने सोचकर कहा- "प्रयागराज "...

उनका मन था कि एक बार लौटकर बच्चों से मिलकर तब तीर्थयात्रा पर जायें। पर कहीं उनके बच्चों का सही पता जानने के लिये सरपंच की कोई चाल न हो। हो सकता है कि उसने झूठ ही कहा हो कि उसके घर का पता मालूम हो गया है। उसे अपने प्राणों का तो मोह नहीं था, पर अपनी बच्ची और उसके पति के जीवन की चिन्ता थी। रेलगाड़ी में बैठते ही उसने सरपंच के घर की पोटली खिड़की के बाहर फेंक दी। लगा कि अपनी यादों को भी पैतृक सम्पत्ति की तरह फेंक कर जा रही हो। मन विरक्ति से भर उठा था।

प्रयागराज में आकर यमुना ने एक ओर संगम स्नान से शांति पायी तो दूसरी ओर से पंडों, पुरोहितों, मंदिरों के दिखावे और पाखण्ड देखकर आहत हुई। कुम्भ मेला था। लोग कल्पवास कर रहे थे। वह भी गंगा के किनारे कल्पवासी वृद्धा के साथ उनकी सेवा करते हुए रुक गयी।... मेले में उस वृद्धा का साथ छूट गया और इस गाँव के पुजारी ने उन्हें सहारा दिया। पुजारी जी वृद्ध हो चले थे। कुटिया में ठाकुर जी की सेवा के साथ पुजारी जी की सेवा का भार यमुना ने स्वतः उठा लिया। पुजारी ने 'बेटी' से संबोधित किया था, तो उसे बेटी का कर्तव्य निभाना पड़ा था। सरपंच ने भी 'बिटिया' कहा था और पुजारी ने भी। पर एक ही संबोधन कितना भिन्न अर्थी था। एक ने बिटिया कहकर सब कुछ छीन लिया था, तो दूसरे ने बिटिया को संरक्षण। आश्रयदाता पुजारी जी भी अब अपनी वृद्धावस्था के कारण असहाय थे। इसलिए उनकी सेवा का दायित्व भी यमुना को निभाना था।

वापस अपने बच्चों से मिलने जाने में यमुना को खतरा लग रहा था। कहीं सरपंच के भेदिये उसकी निगरानी न कर रहे हों।

पुजारिन अइया अपनी कहानी सुनाकर ठाकुर जी की पूजा में बैठ गयी थीं। वे मीरा का भजन गा रहीं थीं।

'मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई ।'...

और मैं उनकी कहानी में उलझी उदास, दुखी हो उठी थी ।

-डॉ० विद्याविन्दु सिंह

In Search of myself-II
Pen Ink & Water color on paper,
8.5x12 inch, Vijendra S Vij, 2020

अन्नदा पाटनी

अमेरिका में बसी कवि, कथाकार, अनुवादक अन्नदा पाटनी का हिन्दी साहित्य में विशेष अनुराग है। फ्रेंच नॉवलिस्ट आंद्रे जीद के उपन्यास का अंग्रेज़ी से हिंदी में अनुवाद, 'प्रेम और प्रकाश' नाम से पुस्तक के रूप में प्रकाशित है। 'अंतर्दृष्टि' तथा 'पूर्णाहुति' पुस्तकों का प्रकाशन। उपन्यास 'तेरे लिए' प्रकाशित।

ईमेल - annada.patni@gmail.com

कविता

-अन्नदा पाटनी

कहाँ मिलोगी?

जाने कहाँ कहाँ ढूँढ रहे हो मुझको,
ज़रा ध्यान से ढूँढा होता मुझको तो
आसपास हर जगह पा लेते मुझको।
हर छोटी से छोटी, मामूली जगह पा लेते,
हर क्षण, हर पल हर लम्हा पा लेते मुझको।

चलो बताती हूँ कि कहाँ मिलूँगी,
उलझन तुम्हारी दूर करुँगी।
भोर होते ही सूरज की किरणों में
हरी दूब पर मोती सी बूँदों में,
चहचहाते पक्षियों के कलरव में।
पशुओं की पदचापों में,
गले में उनके बजती हुई
घंटियों की टनटन में।
लहलहाते खेतों की लहराती फसलों में,
रेगिस्तानों में, रेत के टीलों में।
नदियों, नाले तालाबों में,
धीर गंभीर विशाल सागर में,
हँसती मचलती लहरों की शोख़ियों में,
रंग बिरंगी मछलियों की अठखेलियों में।

झोंपड़ी झुग्गियों में,
टिमटिमाते दीयों में,
मिट्टी के कच्चे मकानों में।
पनघट के छलछलाते घड़ों में
पनिहारियों की पायलों की छम छम में।
मिट्टी के चूल्हों में, जलती लकड़ियों में
हंडिया की खुदबुदाती दाल में।
गाय के शुद्ध घी में, दूध में
रंभाती भैंस के गोबर में।

गलियों में सड़कों में,
शहर की ऊँची अट्टालिकाओं में,
कारों के हुजूम में,
हॉर्न की पौं पौं में।
गैस के चूल्हों में,
कुकर की सीटी में।
फ़िल्मों में थियेटर में।
मंदिर में मस्जिद में,
गुरुद्वारे और चर्च में।

कोई भी जगह ऐसी नहीं
जहां नहीं मिलूँगी।

सही सोच रहे हो,
हाँ, मैं यानी कविता हर जगह मिलेगी,
पर अच्छी और सच्ची कविता वहाँ मिलेगी,
जहां प्यार होगा, वात्सल्य होगा।
आदर और सम्मान होगा।
किसी के बहते आंसू पौंछते में मिलेगी,
प्यासे को पानी, भूखे को खाना,
निर्धन की मदद करने में मिलेगी।

बंजर शुष्क भूमि पर नीरस सी,
कँटीली झाड़ियों में चुभती सी,
भावनाओं संवेदनाओं के ज्वार भाटे में,
करुणा,श्रृंगार, नव रंगों, नवरसों में,
शब्दों, लेखनी से दिल पर दस्तक देगी।

बहुत से विकल्प हैं, विषय हैं,
स्थितियाँ हैं,परिस्थितियाँ हैं।
अब विवेक तुम्हारा है, निर्णय तुम्हारा है।
ढूंढने की ज़रूरत नहीं,
अंदर भी है और बाहर भी है तुम्हारे
जैसी चाहो, जहां भी चाहो,
अपनी क्षमता से पा लोगे।
आम आदमीं की रोज़मर्रा ज़िंदगी में,
चिड़िया की चूँ चूँ में या
वेद पुराणों की ऊँचाई में।

-अन्नदा पाटनी

Rajpath, Delhi 2022, Oil on Canvas, 60x72, Aban Raza

डॉ. शिवजी श्रीवास्तव

झाँसी (उ०प्र०) में जन्में तथा वर्तमान में मैनपुरी में रह रहे डॉ. शिवजी श्रीवास्तव रेडियो-नाटक,एकांकी,पटकथा,वार्ता,संस्मरण,आलेख,समीक्षा,रिपोर्टिंग सहित कविता, कहानी, गीत,नवगीत,गज़ल,हाइकु इत्यादि हिन्दी की अनेक विधाओं में सृजनरत हैं। मैनपुरी के पी.जी. कॉलेज से एसोसिएट प्रोफेसर के पद से सेवानिवृत डॉ. शिवजी का एक कहानी संग्रह 'यक्ष प्रश्न' प्रकाशित है। एक रेडियो नाटक और तीन कहानियाँ पुरस्कृत।

ईमेल - shivji.sri@gmail.com

आदिम राग

-डॉ. शिवजी श्रीवास्तव

"अग्रवाल साहब शहर के पुराने रईस हैं,प्रतिष्ठित व्यवसायी हैं,नगर में उनकी ख्याति उदारमना समाजसेवी और धार्मिक व्यक्ति के रूप में है, उनका हाता शहर का मशहूर हाता है ,हाते के मध्य में उनकी बड़ी सी पुराने ढंग की कोठी है,कोठी के दाहिनी ओर बड़ा सा बगीचा है तथा बाईं ओर एक शिव मंदिर है, उससे लगा हुआ उनकी कार का गैराज है, उसके आगे किराये के लिये चार मकान फिर एक सर्वेंट क्वार्टर है, बंसी इसी क्वार्टर में रहता है। .."

अचानक चीं ईं...ईं करके किसी छोटे स्टेशन पर ट्रेन रुक गई थी। यूँ छोटे स्टेशनों पर इस ट्रेन का स्टॉपेज नहीं था,पर लोग अक्सर यहाँ उतरने के लिये चेन -पुल कर देते हैं। ट्रेन खड़ी होते ही चाय-चाय की आवाजें आने लगीं, मैने अलसाए भाव से खिड़की से बाहर झाँका, एक चाय वाले को देखकर चौंक गया,उससे नजरें मिलीं तो उसके चेहरे पर एक परिचित सी मुस्कान दिखी,अरे !..ये तो बंसी है शायद ,मैने उसे पुकारना चाहा तब तक ट्रेन आगे बढ़ चुकी थी;चाय वाला भी कुछ अचकचाई मुद्रा से मुझे देखता रह गया। मैने देखा वह वहीं खड़ा लगातार मेरी ओर देखे जा रहा था..ट्रेन की गति पकड़ते ही वह एक धब्बे के रूप में तब्दील होते-होते विलुप्त हो गया,मन उलझ सा गया क्या यह बंसी ही था? अगर बंसी ही था तो यहाँ और इस रूप में ?..कहाँ हमेशा मैले से कपड़ो में रहने वाला दीन-हीन सा बंसी.. जोगिया कपड़े पहने भजन गाने वाला बंसी.... हमेशा हाथ जोड़कर सबके सामने घिघिया के बोलने वाला बंसी..और कहाँ ये करीने से कपड़े

पहने आत्मविश्वास से भरपूर चाय वाला..नहीं-नहीं शायद मेरा भ्रम ही होगा...जिस गति से ट्रेन आगे भाग रही थी, मन उससे कहीं बहुत तेज गति से पीछे भागने लगा....दसियों साल पीछे .... और पहुँच गया उस कस्बेनुमा शहर में जहाँ पहले पहल मैं बैंक में पी०ओ बन कर गया था, बंसी से वहीं मुलाक़ात हुई थी।

*****

बंसी, अग्रवाल साहब का घरेलू नौकर था, और मैं उनका किरायेदार। मेरी पोस्टिंग जिस बैंक में हुई थी, अग्रवाल साब उसके पुराने कस्टमर थे, अतः आसानी से ये मकान किराए पर मिल गया था,मकान दिखाते वक्त अग्रवाल साब ने ही बंसी से परिचय कराया- “मैनेजर साब ये बंसी है, ये मकान की साफ सफाई कर देगा, आपको कोई काम हो इससे कह दिया करिए।” ..फिर बंसी की ओर मुखातिब हुए- “देख बंसी, मैनेजर साब को कोई तकलीफ न होने पाए”......जी,...जी बाबूजी ...बंसी ने विनम्रता से कहा, उसके चेहरे पर अजब सी दीनता पसरी थी, तब मैंने विशेष ध्यान नहीं दिया बाद में मुझे एहसास हुआ कि दीनता उसके चेहरे का स्थाई भाव था।

अग्रवाल साहब शहर के पुराने रईस हैं,प्रतिष्ठित व्यवसायी हैं,नगर में उनकी ख्याति उदारमना समाजसेवी और धार्मिक व्यक्ति के रूप में है, उनका हाता शहर का मशहूर हाता है ,हाते के मध्य में उनकी बड़ी सी पुराने ढंग की कोठी है,कोठी के दाहिनी ओर बड़ा सा बगीचा है तथा बाईं ओर एक शिव मंदिर है, उससे लगा हुआ उनकी कार का गैराज है, उसके आगे किराये के लिये चार मकान फिर एक सर्वेंट क्वार्टर है, बंसी इसी क्वार्टर में रहता है। क्वार्टर क्या है बाहर एक बरामदा और अंदर एक कोठरी है जिसमे कोई खिड़की जंगला भी नही है, पर बंसी को करना ही क्या है सोना ही तो है रात को, सारे दिन तो वह चकरघिन्नी की तरह नाचता रहता है, दो चार दिनों में ही मैं समझ गया था कि बंसी अग्रवाल साहब के साथ ही अहाते के सारे किरायेदारों की सेवा के लिए भी सहर्ष तैयार रहता था, यूँ मालिक के घर भी कम काम नहीं नहीं थे,सुबह ठीक पाँच बजे मन्दिर की सफाई-धुलाई,फिर कोठी के हर कमरे में डस्टिंग,झाड़ू पोंछा, बीच-बीच में हर कमरे से कुछ न कुछ आवाजें लगती रहतीं,बड़ी बहू के कमरे से आवाज आती- “अरे बंसी ...बिट्टू के जूते कहाँ रख दिए तूने ...पता नहीं कहाँ ध्यान रहता है तेरा..।” बंसी उस कमरे की ओर भागता तब तक छोटी बहू की आवाज आती.”..बंसी ये कल के बर्तन आज तक नहीं हटाए, पता नही कहाँ ध्यान रहता है तेरा”......इसी बीच अग्रवाल साहब अपने कमरे से चिल्लाते..”बंसी..कल मेरे कपड़े प्रेस कराके नहीं लाया...पता नहीं कहाँ ध्यान रहता है ससुरे का..।” बंसी प्रेस के कपड़े लेने के लिए भागता,रास्ते में दो नम्बर मकान वाली आन्टी जी रोक लेतीं...”अरे बंसी..... सुन,बाहर जा रहा है कहीं,जरा ब्रेड ले आना मेरे लिये..” जब तक बंसी कुछ कहे वे उसके हाथ में बीस का नोट थमा देतीं:.. और हिदायत दे देतीं, “और देख भूलियो नहीं पता नहीं तेरा ध्यान कहाँ रहता है ..आजकल।”

ये आम शिकायत थी सबकी.. पता नहीं तेरा कहाँ ध्यान रहता है.....ये एक दिन की बात नहीं रोज का किस्सा था,सुबह से शाम तक

बंसी दौड़ता ही रहता फिर भी यही सुनने को मिलता..”ठीक से कोई काम नही करता.पता नहीं कहाँ ध्यान रहता है।”...बंसी दीनता के भाव से मुस्करा देता बस।

बंसी का ध्यान कहाँ रहता है..ये कोई ऐसी पहेली भी नही थी जिसे सुलझाया न जा सके... मुझे बहुत जल्दी समझ में आ गया था कि बंसी का ध्यान कहाँ रहता था। पहले दिन मैं बैंक जाते वक्त घर की चाभी बंसी को सौंप गया था ताकि लौटकर आने तक वह थोड़ी सफाई कर दे,पर बंसी ने तो घर इतना व्यवस्थित कर दिया था कि मेरी तबियत खुश हो गई ,मैंने इनाम के रूप में पचास का नोट उसकी ओर बढाते हुए कहा,”अरे वाह बंसी तेरे हाथों में तो जादू है,तबियत खुश हो गई बताओ और क्या इनाम दिया जाए तुम्हें?”..... बंसी के चेहरे पर दीनता भरी मुस्कराहट फैल गई कुछ घिघियाने के से अंदाज़ में हाथ जोड़कर बोला---”साब जी,इनाम नईं चईये हमें,..वो,वो एक बात है..” वह रुक गया,- “हाँ बोलो,बोलो क्या बात है?”- मैने प्रोत्साहित किया। उसने नीची नजरें कर के कहा- “साब,वो आप हमाओ ब्याओ करा देओ”...मुझे झटका सा लगा, लगा कुछ गलत तो नहीं सुन लिया, अतः पुनः पूछा -”क्या?, क्या कहा,तुम्हारी शादी करा दूँ ?”.. उसने सर झुका लिया, तभी अचानक अग्रवाल साहब कमरे में आ गये..”क्यों..रे...यहाँ भी तेरा वही राग शुरु हो गया?..”

मैंने प्रश्नवाचक निगाहों से अग्रवाल साब की ओर देखा, वे ठठा कर हँसे और बोले-”अरे मैनेजर साब ये बावला है इसे आजकल शादी की धुन लगी रहती है” फिर बंसी को डाँटते हुए बोले--”भाग यहाँ से,खबरदार जो मैनेजर साब को परेशान किया, जब देखो तब शादी-शादी-शादी, अबे शादी कोई गुड्डे गुड़िया का खेल है क्या ?”

बंसी चला गया,अग्रवाल साहब भी औपचारिक हाल-चाल पूछकर चले गए,मैने उनसे दबे स्वर में पूछा भी..”ये बंसी शादी की क्या बात कर रहा था”, आदत के मुताबिक वे जोर से हँसे थे....”अरे, बावला हुआ है ससुरा... चाहता है इसकी शादी करा दे कोई...हर किसी से यही राग अलापता रहता है”...इससे ज्यादा न मैंने पूछा, न उन्होंने बतलाया।

सुबह जब बैंक जाने का समय हुआ, बंसी आकर खड़ा हो गया. “साब आपके बैंक जाने के लिये रिक्शा आ गया।” मैंने अचरज से उसे देखा- “पर मैंने तो कहा नहीं था?” उसके चेहरे पर ऐसी दीनता का भाव आया मानो कोई अपराध किया हो। उसने आँखें झुका लीं और हथेलियाँ मलते हुए घिघियाने के अंदाज में बोला,”साब वो कल्लू है न, बाई के रिक्शा में सारे हाते वारे बैठत हैं सो हम लिवा लाये, आप न जायें तो मने कर दें बाय?”

...”अरे नहीं, अब ले आए तो ठीक किया, मैं उसी से चला जाऊँगा।”

मैं कल्लू के रिक्शे में बैठ गया, कल्लू एक नम्बर का बातूनी और चलता पुर्जा किस्म का व्यक्ति था, रिक्शा धीमे चलाता था जबान तेज,उसने बिना पूछे ही सारी जानकारियाँ देनी शुरु कर दीं,”साब...कोठी वाले बाबूजी भौत बढ़िया आदमी हैं,हमेशा हमाए रिक्शा पे बैठते है,और साब बिना माँगे पइसा भी जादा देते हैं....साब हाते के सब लोग हमायेई रक्सा पे बैठबो पसन्द करत हैं।...और साब जे है न अपनो बंसी,जे तो

"ये तो मुझे बहुत बाद में मालूम हुआ कि कल्लू और बंसी में खूब छनती है, दोनों हमउम्र हैं, कल्लू का झोंपड़ा सामने ही है, गाहे-बगाहे कल्लू उसे थोड़ी सी पिला भी देता, अभी तीन चार महीने पहले ही उसकी शादी हुई है; उसकी बीबी सीमा खूबसूरत तो नहीं है पर बहुत हँसमुख और सलीके वाली है, वह बंसी से खूब मजाक करती है, बंसी को भी उसकी हँसी- दिल्लगी अच्छी लगती थी। "

बिचारौ भौतई सीधो है..सबेरे से संझा तक बैल की तरह जुता रैता है...हमने कैई बार समझाई कि भइया जरा अपने लाने भी टैम निकालो, पर वो सुनताई नईं....साब जी सई कई न हमने...।" उसने मेरी राय जाननी चाही।

" हाँ भई सही बात है तुम्हारी"....मेरी बात के साथ ही उसने बात जारी रखी- "अब साब कै रओ है के हमाओ ब्याओ करा देओ...अब साब आपई बताओ बाको ब्याओ बाके घरवारे करायें ...के हम लोग करायें"

ये तो मुझे बहुत बाद में मालूम हुआ कि कल्लू और बंसी में खूब छनती है, दोनों हमउम्र हैं, कल्लू का झोंपड़ा सामने ही है, गाहे-बगाहे कल्लू उसे थोड़ी सी पिला भी देता, अभी तीन चार महीने पहले ही उसकी शादी हुई है; उसकी बीबी सीमा खूबसूरत तो नहीं है पर बहुत हँसमुख और सलीके वाली है, वह बंसी से खूब मजाक करती है, बंसी को भी उसकी हँसी- दिल्लगी अच्छी लगती थी, वह रोज एक दो बार उसके झोपड़े में उस वक्त जरूर जाता था जब कल्लू न हो..यूँ बंसी के मन मे कोई खोट न था बस उसे तो सीमा भौजी का हँस- हँस कर मजाक करना और उनके हाथ की बनी चाय पीना बहुत पसंद था,पर सबसे बड़ी बात ये थी कि कल्लू की एक साली भी थी जो बंसी के मन को भा गई थी। कल्लू के सामने तो बंसी चुप रहता था पर अकेले में सीमा भौजी की मनुहार करता था-- "ए भौजी,हमाओ ब्याओ भी करा देओ,कोऊ अपनी जैसी खूबसूरत ढूँढ ल्याओ अपने गाँव से।" ..सीमा मुस्करा कर कुछ मजाक कर देती तो वह झेंप जाता, इसी आड़ में सीमा भी उससे अपने दो चार काम करवा लेती... कभी हैंड पम्प से चार बाल्टियाँ पानी भरवा लेती,कभी बाज़ार का कोई काम बता देती, बंसी खुशी-खुशी सारे काम करता, इन सब में वह भूल जाता कि बड़ी बाबूजी या माताजी ने उसे किस काम से भेजा था, और घर पहुँच कर मालिक-मालकिन की डाँट भी खानी पड़ती।

तीन महीने में ही मुझे बंसी के बारे में काफी जानकारी हो गई थी। बंसी का गाँव मुश्किल से पाँच-छः किलोमीटर पर ही है, पर उसका अब वहाँ कुछ भी नहीं है,एक चचेरा भाई है, जो गाँव में ही मजूरी करता है। बंसी जब छोटा ही था तब उसके पिता की मौत हो गई थी,वे गाँव मे मजदूरी करते थे, उनके मरने के बाद उसकी माँ उसे लेकर शहर आ गई यहाँ उसे अग्रवाल साहब के घर नौकरी और रहने का ठिकाना मिल गया, उसके साथ बंसी भी यहाँ नौकर होकर रह गया, दो बरस पहले माँ भी चल बसी तबसे बंसी अकेला है। अग्रवाल साहब के हाते के बाहर भी कोई दुनिया

है ये सोचने की उसे फुर्सत ही नहीं थी।

लगभग रोज ही शाम बंसी मेरे कमरे में आकर बैठ जाता, उसे टी.वी. देखने का शौक था ,मैं टी.वी.ऑन कर देता बंसी तल्लीनता से देखने लगता, मैं जानता था कि उसे टी.वी. सीरियल्स में कुछ समझ नहीं आता बस उसे तो उसके अंदर चलती बोलती सजी,सँवरी स्त्रियाँ अच्छी लगती थीं, वह उन्हें अपलक निहारता और मुस्कराता, मेरे कमरे में वह इसलिए भी बैठता था ताकि मालिक के घर से किसी भी समय पुकारे जाने पर वह भाग कर जा सके,साथ ही मेरे अकेले होने के कारण उसे कोई रोक-टोक भी नहीं थी।

******

मैं कल्लू के रिक्शे की स्थाई सवारी हो गया था,वह मुझे रोज बैंक ले जाता और ले आता, उससे रोज बंसी के कोई न कोई किस्से सुनने को मिलते, हाते के बाहर तमाम दुकानदारों के लिये बंसी एक मज़ाक का विषय था। कभी पान वाला, कभी ढाबे वाला, परचून वाला ..सभी उसके विवाह की बात पर उसका मजाक बनाया करते, वे उसे प्रलोभन देते कि उसका ब्याह करा देंगे फिर उससे कोई न कोई बेगार करा लेते, कल्लू के पैर पैडल पर रहते पर जुबान पर बंसी के नए-नए किस्से..

...."एक बार तो गज़बई हो गओ साब." कल्लू कोई पुराना किस्सा सुना रहा था, वह अपनी हँसी दबाने की असफल कोशिश कर रहा था..-"वो चौधरी है न साब, बोई ढाबे वारो...बाने बंसी को बरगला लओ के बाके गाँव में एक लरकी है ब्याओ के लाने, वो बाको ब्याओ बंसी से कराये दिये,...बाने जेई आड़ में एक हफ्ता बर्तन मंजवा लिये ढाबे के...बिचारो बंसी मालिक के काम करके बीच बीच मे टैम निकाल के बर्तन माँजत रओ..मालिक की डाँट भी सुनत रओ...,फिर .."इतना कह कर वह हँसने लगा।

--"फिर क्या?..शादी कराई नहीं?.मैंने प्रश्न किया।

...साब,लड़की होती तो ब्याओ होतो,चौधरी ने बेवकूफ बना के वासे खूब काम कराओ

जब बंसी ने लड़की दिखावे की जिद करी तो..."बात बताते बताते फिर खिलखिला के हँसा कल्लू....."

"तो क्या हुआ ..?" मैंने प्रश्न किया ।

"साब वो चौधरी ने ढाबे के एक नौकर को साड़ी पहना के बिठा दओ और बाके पास बंसी को भेज दओ.. बंसी ने खूब रसीली बातें करीं, फिर जैसेई बाने घूँघट खोलो.".........फिर कल्लू की हँसी रुकी ही नहीं,रिक्शे की गति बहुत धीमी हो गई उसे लगा शायद मैं भी हँसूँगा, पर मैंने झिड़का--"गलत बात है किसी की मजबूरी का मजाक उड़ाना, फिर बंसी तो इतना सीधा है।"

कल्लू चुप हो गया मैंने कहा- "कल्लू तुम तो दोस्त हो बंसी के कहीं उसका ब्याह करा क्यों नहीं देते..."

कल्लू धीरे से बोला-"हम कैसे करादें साब."

"क्यों,कोई गरीब लड़की नहीं है तुम्हारी नजर में। कोई गरीब बेसहारा हो तो बसा दो इस बंसी की गृहस्थी.."

"...साब...गरीब लड़कियाँ तो भौत हैं पर जा की जात बिरादरी की कौनउँ नईं है।"..

"जात बिरादरी क्या होती है भाई, दुनिया भर में दो ही जात हैं, गरीब और अमीर"...मैंने अपना ज्ञान

देना चाहा।

"वो तो ठीक है साब पर जात बिरादरी भी होती तो हैई।"

"अरे भाई ये सब बेकार की बातें हैं, इन्हें तो तोड़ना ही पड़ेगा, तुम्हीं लोग तोड़ो।"

शायद कल्लू को मेरी बात कुछ अजूबों सी लगी बोला- "अब जात बिरादरी कैसे टूट सकत है साब।"

मैंने उत्साहित होके अपनी बात बढ़ायी- "देखो भाई, बंसी सीधा सच्चा इंसान है, अब अगर तुमाई रिश्तेदारी या जात बिरादरी में कोई जरूरतमंद गरीब लड़की हो तो तो उससे बंसी की शादी करा दो....."

अचानक भूचाल सा आ गया, रिक्शा बुरी तरह डगमगाया, ऐसा लगा कल्लू का शरीर काँप गया हो, कल्लू के स्वर में आवेश आ गया- "साब जी आपको मालूम नईं का जे बंसी धानुक है ...हमाए नाखून इत्ते नईं गिर गए साब के धनुकन के घर बिटिया दें, अरे जे तो वाल्मीक से भी नीचे है हम तो फिर भौत ऊँची जात हैं, हम लोधे ठाकुर हैं साब"..ठाकुर शब्द पर उसने कुछ ज्यादा ही जोर दिया था।

बैंक आ गया था,मैं रिक्शे से उतरा, कल्लू का चेहरा अजीब विद्रूपता से भरा हुआ था,हाथ जोड़कर बोला-"साब कछू गलत बोल दओ हो तो माफ करियो,पै जो नीचे पैदा भओ बो नीचई रेहे।"

मेरा कुछ उत्तर सुने बिना ही तेजी से पैडल मारते हुए उसने रिक्शा आगे बढ़ा दिया। मुझे पश्चाताप सा हुआ,नाहक किसी के फटे में टाँग फसायी, अफसोस भी हुआ,मैं सोचता था कि जातिगत ऊँच-नीच का अहंकार सवर्णों में ही होता है,पर

"वह तन से नही मन से भी जोगी हो गया था शायद, काम करता और जब फुर्सत में होता टूटे फूटे भजन या कबीर के पद गाता रहता, न अब वह किसी के उपहास का पात्र था न क्रोध का, हाँ कभी-कभी उस पर दया अवश्य आती थी। बहुत से लोग उसे बाबा जी भी कहने लगे थे। सीमा का चाय का धंधा भी चल निकला था,कल्लू फिर लौट कर नहीं आया। "

दलितों में भी ये बीमारी इतनी गहरे तक जड़ें जमाए है, इसका अहसास पहली बार हुआ। ये वो दिन थे जब अपने अधिकारों के लिए सजग दलित और पिछड़ी जातियाँ राजनीति में अपनी शक्ति बढा कर प्रदेश की सत्ता पर काबिज हो चुकीं थी,पर शायद विकास की किरणें ऊपरी तल पर ही रुकी हुईं थीं कोई प्रगति चेतना निचली सतह तक नहीं पहुँच रही थी..प्रदेश में चुनाव की आहटें शुरु हो गईं ,सड़कों पर नीले,लाल,पीले झंडों के काफिले नए-नए नारों के साथ निकलने लगे थे,हाते के बाहर तमाम दलों के नेताओ के जमघट होने लगे थे,चौधरी के ढाबे की बिक्री बढ़ गई ,कल्लू के रिक्शे पर नीला झण्डा लगा रहता अक्सर दो चार नेता किस्म के लोग उसके रिक्शे में बैठकर चुनाव प्रचार को निकल जाते।वे दलितों को संगठित करने और वोटों को बढाने के कार्य हेतु सभी से व्यक्तिगत सम्पर्क कर रहे थे। अक्सर कल्लू अपने साथ बंसी को भी ले जाता

बंसी को देर से लौटने पर मालिक के घर बुरी तरह डाँट पड़ती, पर बंसी को उस डाँट से कोई फर्क नही पड़ता, वह अक्सर ही कल्लू के साथ चुनाव प्रचार में चला जाता...

एक दिन सुबह-सुबह अग्रवाल साहब का तीखा स्वर कानों से टकराया,-"ठीक है जा,फिर आना मत लौट के."अमूमन वे मध्यम स्वर में ही बोलते है, मैंने उठकर झाँका,देखा बंसी सिर झुकाए खड़ा है और वे उसे बुरी तरह डाँट रहे हैं, अग्रवाल साब ने मुझे देख लिया बोले -"आप समझाइए इसे मैनेजर साब,एक हफ्ते की छुट्टी लेकर चुनाव प्रचार में जाएगा, कह रहा है अब हम गरीब लोगों की भी पार्टी बन गयी है, उनकी सरकार बन जाए तो सबके अच्छे दिन आ जाएंगे।"

बंसी चुपचाप खड़ा रहा,अग्रवाल साहब का चिल्लाना बदस्तूर जारी रहा-"अबे याद रख पार्टी सिर्फ नेताओ की होती है तेरे जैसों के लिये नहीं,वे महीने भर तुझसे चाकरी कराएँगे फिर चुनाव बाद भगा देंगे तब कहाँ जाएगा तू....." वे क्षण भर रुके फिर अंतिम प्रहार किया.."अच्छा सुन अगर तेरी वो जो कमजोर लोगों की पार्टी है तो जा पूछ के आ पार्टी वालों से वे तेरा ब्याह करा देंगे... अगर ब्याह करा दें तो तू जरूर चला जा,मैं नहीं रोकूँगा तुझे,पूरे महीने भर की छुट्टी दे दूँगा...." ये बंसी का कमजोर बिन्दु था...वह बिना बोले चुपचाप बाहर निकल गया,दो घण्टे बाद बंसी वापस आकर चुपचाप अपने काम में जुट गया,बिना बोले सर झुकाये वह सारा दिन काम में जुटा रहा,लोगों ने देखा कि उस दिन वह एक बार भी व्यर्थ में हाते से बाहर नहीं निकला,शाम को चुपचाप अपने कमरे में जाकर लेट गया,रात को मैंने ही उसे आवाज देकर बुलाया,वह चुपचाप मुँह लटका कर खड़ा हो गया ...."क्या बात है बंसी आज टी.वी. नहीं देखोगे."..वह कुछ बोला नहीं उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। मैंने उसे सांत्वना देकर पानी पीने को कहा,मैंने टी.वी. ऑन कर दिया,वह बैठ गया उसने धीरे से अपना सर पलंग पर टिका दिया और किसी छोटे बच्चे की तरह फूट-फूट कर रोने लगा,मैंने उसे रोने दिया,कुछ कहा नहीं,थोड़ी देर बाद अपने आप कहने लगा, "साब हम कल्लू को अच्छो आदमी समझत थे वो तो भौतई बुरौ आदमी है।"

"क्यों,ऐसा क्या किया उसने?"

"साब हमने बासे अपनी ब्याओ की बात कई तो बोलो कै ......"इतना कह कर वह रुक गया।

"क्या बोला? उसने?"

"साब....हमें ब्याओ करने है कोऊ पाप नईं कन्ने..."

"कैसा पाप?"

"साब हमें घरवारी जातें चईये के हमेउ औरत के हात की रोटी मिलै, साब संझा लौं काम करत-करत देही टूटन लगत है, हमाओ भी मन करत है के घरवारी होय तो नैक पैर दबाए दे देही में तेल लगाए देय.....साब हमाओऊ मन करत है कि अपने दुख सुख की बातें करवे वारो होय कोऊ, साब बुजुरुग लोग झूठ नई कै गये के बिन घरनी घर भूत का डेरा....साब घर में मेहरारू होय तो घर अपने आपई जगर मगर करत है,...नाय तो घर, घर नाय लगत, साब बिना घरनी के इकल्ले जिनगी नाय कट सकत......" आज उसने पहली बार अपने मन का वह हिस्सा मेरे सम्मुख खोला जो संवेदनाओं के कोमल तन्तुओं से बंधा हुआ था, कोई सोच भी नहीं सकता था कि ऊपर से मूरख और दयनीय से व्यक्तित्व के भीतर स्नेह का

इतना सरस निर्झर छुपा होगा। उसने अपनी बात जारी रखी- “साब कल्लू ने कल भौत गल्त बात करी...कैन लगो गले मे घण्टी बाँधवे की जरूरत का है.....औरतन की कमी थोरेई है अंटी ढीली करो और खूब मजे करो......हमाई तो लड़ाई हो गई बासे अब साब हमें कोऊ औरत की ऐसी भूख नाँय कि हम पाप करम करें।कल्लू जैसो खुद है वैसोई हमें समझ रओ ,इत्ती अच्छी बीबी मिल गयी तोऊ सारो दूसरी औरतन के फेर में रहत है....।”

वह आवेश में बहुत कुछ बोल गया फिर उसे अहसास हुआ कि शायद उसे ये सब नहीं कहना चाहिये था,उसने मेरे पैर पकड़ लिए..”साब छोटे मौं बड़ी बात हो गयी, मोय माफ कर देओ..... और साब बाबूजी से न कहियो जे बातें।”

****

उस दिन के बाद बंसी चुप-चुप सा रहने लगा,बाहर भी तभी निकलता जब घर वाले किसी काम से भेजते,कल्लू से भी अबोला सा हो गया, सीमा भौजी के पास भी नहीं जाता, बाहर के लोग भी अब उससे मजाक करने से डरने लगे थे,एक दिन बाहर पान वाले ने कुछ मजाक कर दिया तो बंसी उससे उलझ गया, उसका कॉलर पकड़ कर लड़ने पे आमादा हो गया था, तबसे लोग इसे पागल कहने लगे। चुपचाप काम करना और अपनी कोठरी में जाकर लेट जाना यही दिनचर्या थी उसकी, अग्रवाल साहब के घर से ही जो कुछ खाना मिलता खा लेता था, अब उसका विवाह का राग भी बन्द हो गया था, बाहर की दुनिया की हलचलें कभी कभी हाते में सुनायी पड़ जाती थीं। ज्यों-ज्यों चुनाव पास आ रहे थे सड़कों पे शोर, झण्डे और रैलियों की रेलम पेल बढ़ती जा रही, अब कल्लू का रिक्शा मुझे उपलब्ध नहीं होता था,या यूँ कहें कि कल्लू स्वयम ही मुझे बिठाने से कतराता था, उसके रिक्शे पे नीला झंडा लगा रहता,और प्रायः चुनाव प्रचार में ही उसके रिक्शे का उपयोग हो रहा था, कल्लू की कमाई भी खूब हो रही थी, अब अक्सर ही वह नशे में दिखायी पड़ता, रोज देर रात को नशे में लौटता और फिर बीबी को बात बेबात मारता पीटता, रात के सन्नाटे में उनके झगड़े की आवाजें हाते के अंदर तक आतीं, सीमा की चीखें सुनकर बंसी व्याकुल हो जाता और हाते में टहलने लगता। एक दिन शाम को बंसी मेरे पास आया और बोला-”साब वो कल्लू की घरवारी है न वो सीमा भौजी, वो कल हमाए पास आई हती मदद माँगवे,साब भौत परेशान है वो,कल्लू काऊ और औरत के फेर में है,सब रुपया पइसा बी उतईं लुटा रओ है, अब भौजी की मंशा है हम कल्लू को समझाएँ... साब हमाई बात तौ वो समझवे से रओ आप समझाओ नैक।”

मुझे गुस्सा आया-”मैं क्यों समझाऊँ भला,,और बंसी तुम ये सब छोड़ो अपनी शादी की सोचो।”

...”साब जा जनम में हमाओ ब्याओ तो होवै से रओ”..उसने मायूसी से कहा।

..”ऐसा क्यों सोचता है तू”..मेरे कहने पर धीमे से बोला-”साब एक तो हम छोटी जात, फिर हम पढ़े लिखे नई, खेतीबारी जमीन जैदाद कछु पास नईं, माँ बाप नई,को कर दिए हम से ब्याओ।” उसने कटु सत्य कहा था,पर मैंने उसे झूठी सांत्वना दी- ”ऐसा कुछ नहीं है,अब समाज बदल रहा है, तुम्हें भी कोई लड़की मिल जाएगी।”

“तो साब आप कल्लू को समझा देते, भौजी भौत

Delusion at mid night-II, Water color on paper, 8.5x12 inch, Vijendra S Vij, 2020

दुखी है"..वह फिर उसी बात पर आ गया।
-"देखो बंसी कल्लू अभी किसी की नहीं सुनेगा, उसकी बीबी से कहो, वह भी कहीं काम-धाम ढूंढ के चार पैसे कमाए, और अपना खर्चा चलाए, कुछ न कर सके तो अपने झोपड़े के बाहर दो कुर्सियाँ डाल के चाय बेचना ही शुरु कर दे, कल्लू को जब कहीं ठोकर लगेगी तो वापस आ जायेगा।"

तीन चार दिन बाद मैंने देखा कि कल्लू के झोपड़े के बाहर एक चाय की दुकान खुल गयी ,कल्लू की बीबी ने एक बेंच डाल दी थी, गैस का चूल्हा रख लिया था, दो तीन रिक्शे वाले वहाँ चाय पी रहे थे, बंसी ने मुझे बताया कि मेरे रास्ता बताने पर ही उसने ये दुकान खोल ली है।
ये सब बतलाते हुए उसके चेहरे पर एक सुकून था। कुछ दिनों बाद उसकी चाय की दुकान चल निकली, इधर चुनाव भी खत्म हो गए थे, कल्लू भी कुछ सुधरा हुआ दिखने लगा, वह बंसी से फिर पुराना जैसा मेल जोल बढाने लगा था, पर अपनी बीबी से झगड़ना उसकी रोज की आदत बन गयी थी। इसी बीच एक अजब संयोग हुआ,जिससे बंसी के अंतस में मुरझाते हुए शादी के भाव फिर सरस् होने लगे,असल में बंसी के गाँव से चचेरे भाई की शादी की खबर आयी , मालूम हुआ दिल्ली में उसके मामा ऑटो चलाते हैं उन्होंने ही शादी करा दी, शादी क्या करायी सस्ते में बंगाल की कोई लड़की खरीद के उसके घर बिठा दी। बंसी ने अपने भाई से मनुहार की कि मामा से कहकर उसका भी घर बसवा दे...भाई मान गया एक दिन वह मामा को लेकर आ भी गया, बंसी ने अपनी सारी पीड़ाओं के साथ ब्याह न हो पाने की पीड़ा को भी करुण ढंग से व्यक्त किया, मामा जी गम्भीरता से सुनते रहे फिर धीरे से बोले,"बेटा कुछ रुपये हैं तेरे पास, अगर रुपये हों तो ब्याह हो जाएगा।"
.....शादी हो जाएगी..इन शब्दों को सुनकर ही बंसी का कुम्हलाया मन हरिया गया,बोला-
"मामा जी कित्ते रुपैया?"
"बेटा वैसे तो खर्चा काफी आता है पर तुमाए लिये कम में काम करा दूँगा..फिर भी पचास हजार तो होना ही चाहिये।" बंसी का मुँह फिर मुरझा गया। मामा बोले-"इतने दिन से कमा रहा है क्या जोड़ा तूने?"
"मामा वो ऐसी बात है के खाना,खरचा रैना सैना

तो सब मालिक के घर, कपड़ा लत्ता मालिक के, बीमार होंय तो दवा मालिक करवाएँ, जेब खच्च खों हर हप्ता दस दिन में मालिक सौ दो सौ दे देत हैं,अब जोरें काए में। हाँ जब कभउँ कछू पैसा बचत है वे एक बक्सा में रखत जात हैं।"

.."अबे तो तू बिना तनखा के काम कर रहा है,जे तो अंधेर है सरासर ,अब ब्याह का मुफ्त में होगा, फ़िर क्या खिलायेगा बहू को?"

.."वो मालिक से बात करवे पड़े,वे ब्याओ को खरच जरूर दियें, पर कछू कम खच्च में हो जाए तो?."...मामा बोले -"देख बंसी तेरे लिये भी लड़की खरीद के ही लानी होगी, बंगाल, बिहार,बुन्देलखण्ड या नेपाल से गरीब घरों की लड़कियाँ सस्ते में मिल जाती हैं, बहुत सस्ती भी देखो फिर कोर्ट में शादी की लिखा पढ़ी हो, कित्ता भी कम करो दस पन्द्रह हजार तो चईये ही।"

बंसी चुपचाप उठा उसने अपने बक्से से जोड़े बटोरे पैसे निकाले गिने,पूरे छह हजार थे,मामा ने रुपये रख लिये और बोले कुछ और इंतजाम करो,कुछ हम लोग लगा देंगे तेरा वंश तो चलानाई है। सारे रुपये लेकर आश्वासन देकर मामा चले गए कि महीने दो महीने में किसी लड़की का इंतजाम कर देंगे।

दो महीने हो गए न मामा आए न कोई सन्देश,अब तो बंसी का और अधिक उपहास उड़ने लगा, अग्रवाल साब के घर की बहुएँ तक उसका मजाक बनाने लगीं, ऊपर से खिसियानी हँसी हँसता पर अंदर ही अंदर वह टूटता जा रहा था, वह कम ही बोलता,जब कभी कल्लू की बीबी की दुकान पर चाय पीने चला जाता,एक वही औरत थी जो उसका मजाक न बना के उसे ढाँढ़स बढ़ाती थी, साथ ही अपना दुखड़ा भी सुनाती थी,कल्लू उसकी रोज ही किसी बात पर पिटाई कर देता था, बंसी कुछ नहीं बोलता पर मन ही मन कल्लू को कोसता और सोचता,उसके पास घरवाली नही है पर जिसके पास है वो उसकी कदर नईं करता। चार महीने बाद आखिर एक दिन मामा का संदेश आ गया,वे लड़की ले आये थे उन्होंने बंसी को गाँव बुलाया था बंसी को लगा वह नाहक मामा को गलत समझ रहा था,वह गाँव जाने को तैयार हुआ पर खाली हाथ कैसे जाए कुछ तो खर्चा होगा ही,उसने अग्रवाल साहब से कहा उन्होंने तीन हजार दे दिये पर अभी भी रुपये कम थे उसने कल्लू को समस्या बतलायी कल्लू ने भी उसे दो हजार रु ब्याज पर दे दिये।

*****

आखिर बंसी की मनोकामना पूरी हुई,उसका विवाह हो गया,मामा बहुत सुंदर लड़की ले कर आए थे,वह बहू लेकर आया तो सारे हाते में खुशी की लहर दौड़ गई,कल्लू जरूर कुढ़ कर रह गया,इत्ती सुंदर औरत...गोरा रंग,गोल चेहरा,बड़ी बड़ी आँखें.....ये तो लँगूर के हाथ हूर वाली बात हो गयी ,धनुकन में इत्ती खूबसूरत औरत कहाँ से आयी, जरूर मामा किसी अच्छे घर की लुगाई उड़ा लाया होगा....पर ऊपर से उसने खुशी ही जाहिर की। अग्रवाल साहब की माताजी ने बुलावा लगवाया,अग्रवाल साहब ने ढोल बजाने वालों को बुला लिया,सभी ने उपहार दिए उसके गांव से भी कुछ रिश्तेदार आये थे,देर रात तक नाच गाना हुआ, कल्लू की बीबी भी उस दिन जम कर नाची,बंसी की खुशी का ठिकाना न था उसके पैर जमीन पर नहीं पड़ रहे थे , उसने चाय -मिठाई

का इंतजाम भी किया था।

उस रात कल्लू ने जमकर शराब पी, देर रात तक उसके झोपड़े से तेज-तेज गाली गलौज की आवाज़ें आती रहीं वह सीमा को गरिया रहा था- हरामजादी,छिनाल,भौत मटक मटक कर नाच रई थी,वो ससुरा बंसी तेरा यार लगता है का..... सीमा भी कुछ चीख रही थी,मार पीट के स्वर भी बाहर आते रहे, आवाजें बंसी के कानों तक भी जा रहीं थी ,उसे बुरा लग रहा था, उसकी इच्छा हुई जाकर कहे कि सीमा भौजी में कोई खोट नही उसका ऐसा वैसा कोई चक्कर नही,पर वह बेबस था।

सुबह-सुबह कल्लू बंसी के कमरे में आ गया बंसी उससे बात नहीं करना चाह रहा था ,उसने बेरुखी से कहा-"काय को आगए ....दारू उतर गयी .."कल्लू बोला - "यार रात जादा चढ़ गई थी,सो उल्टा सीधा बक दिया,हमने सोची माफी मांग लें और नयी भौजी के हाथ की चायउ पी लें।"

बंसी कुछ कहता उससे पहले ही उसकी बहू ने स्टोव जलाना शुरू कर दिया, और इशारे से बताया कि दूध नहीं है, बंसी चुपचाप दूध लेने चला गया,साथ में बिस्कुट भी ले आया। चाय पीकर चलते वक्त कल्लू जोर से बोला-"देख बंसी वो दो हजार की जल्दी नईं है कछू,और रुपैय्या की जरूरत हो तो बता दियो. भौजी को परेशानी न हो कछू" ..बंसी को बुरा लगा पर चुप ही रहा।

दो चार दिन में बहू सबको पहचान गयी, उसने मालिक-मालकिन का भी मन जीत लिया, बंसी खूब खुश रहने लगा था, पर ये कल्लू किसी बहाने दो तीन बार उसके कमरे में जरूर आता बंसी को बुरा तो बहुत लगता था, पर क्या कहे एक तो वह दोस्त था, दूसरे बंसी कर्जदार भी था उसका।

*****

एक दिन मैं बैंक से लौटा तो देखा कल्लू का रिक्शा हाते के अन्दर खड़ा है, कल्लू ने मुझे नमस्ते किया, तब तक बंसी और उसकी बहू बाहर निकले बंसी ने आज काफी साफ-सुथरे कपड़े पहने थे उसकी बहू भी सजी-सँवरी थी, दोनों ने मेरे पैर छुए, बंसी मुस्कुरा कर बोला-''साब हम लोग देवी के मंदिर जा रए, मेला भी लगौ है सो नैक देर में आवेंगे, बाबूजी को भी बता दओ है।".. मैं मुस्करा दिया,मुझे अच्छा लगा, दोनों कल्लू के रिक्शे में बैठ गए कल्लू ने रिक्शा बढ़ा दिया। मैं रात में बहुत देर तक बंसी के बारे में सोचता रहा, शादी के बाद उसके चेहरे की रंगत बदल गयी थी, मैं कब सो गया पता नही चला।

....आधी रात को तेज चीख़ चिल्लाहट और शोरगुल से मेरी नींद टूट गयी, ये आवाजें नीचे हाते से ही आ रहीं थीं, मैंने बाहर निकल कर देखा, हाते में भीड़ सी लगी थी बंसी दहाड़ें मार कर रो रहा था हाते के सारे घरों के लोग उसे घेरे खड़े थे, अग्रवाल साहब का पूरा परिवार भी इकठ्ठा था, मैंने वहाँ पहुँच कर जानना चाहा कि क्या हो गया है, अग्रवाल साब मुझे देखते ही बोल पड़े, "अरे मैनेजर साब बंसी की बीबी भाग गयी"

..".ऐं!!..भाग गयी!!!....मेरे मुँह से इतना ही निकला।"

.."वो कल्लू भगा ले गया कहीं....दोनों को मेला दिखाने ले गया, इसे मूर्ख बनाकर चकमा देकर निकल गए दोनों"...उन्होंने पूरी बात बतलायी।

बंसी का रोना कम नहीं हो रहा था,कोई समझ नहीं पा रहा था कि उसे सांत्वना कैसे दी जाए, अग्रवाल साहब ने उसे डाँटा-"चुप कर अब,औरतों की तरह रोए जा रहा है ससुरा, चार दिन भी बीबी को सम्हाल कर नहीं रख पाया। इसी बूते पे कहता था कि हमारा ब्याओ करा दो..ब्याओ करा दो.....हो गया ब्याओ,हो गयी तसल्ली?" ऐसा लगा बंसी के पौरुष पर चोट हुई हो, अचानक ही वह फुफकारता सा मेन- गेट की ओर ये कहता हुआ भागा--"जा कल्लू ने हमाई घरवारी पे डाका डारो,आज हम बाकी बीबी को नाँय छोडें...."लोगो ने उसे पकड़ना चाहा पर उसकी उस दुबली देह में गजब की ताकत आ गयी थी। वह किसी हिंसक पशु सा खतरनाक लगने लगा, एक ही झटके में वह सबको धकियाता हुआ गेट से बाहर हुआ और उछल कर कल्लू के झोपड़े में घुस कर सीमा की देह पर टूट पड़ा उसे नोचने खसोटने लगा, सीमा सतर्क थी,उसने उछल कर झट से हाथ में कलछुल उठायी और बंसी को पीटना शुरू कर दिया,बंसी बाहर भागा वह भी चिल्लाते हुए उसके पीछे भागी- "रुक,कहाँ भाग रहा है मरदूद,अपनी लुगाई सम्हाल नही पाया, मेरे पे जोर आजमाइश करेगा, हाथ लगाके तो देख हड्डी-पसली को चूरमा बना दूँगी।" उसने कलछुल से बंसी को बुरी तरह पीटना शुरू कर दिया, अजीब दृश्य उपस्थित हो गया था,वह पीटे जा रही थी पर बंसी एकदम शांत हो गया औऱ जमीन पे सर झुका के चुपचाप मार खाने लगा, सीमा ने भी कलछुल फेंकी और झोपड़े में चली गयी, बंसी भी चुपचाप सर झुकाकर अपनी कोठरी में घुस गया। हम सब भी अपने-अपने कमरों में आ गये, अग्रवाल साहब अवश्य भुनभुनाते हुए चले गए....इसको कल ही नौकरी से निकालता हुँ, बहुत ड्रामा हो गया ससुरे का, कुछ ऊँच नीच हो जाये तो पुलिस तो हमारे ही घर आएगी।...

दूसरे दिन से सब सामान्य चलने लगा, अलबत्ता अब बंसी इंसान नहीं चलता फिरता प्रेत लगता था, बिना बोले सारे काम करना और फुर्सत में मन्दिर की देहरी पर बैठे रहना ही उसका काम था, फिर सुना वो कभी-कभी किसी आश्रम में भी जाने लगा था। एक दिन अचानक वह साधुओं जैसा जोगिया बाना पहन के आ गया। "ये क्या ड्रामा है".....अग्रवाल साहब ने डाँटा।– "बाबूजी हम जोगी हो गए अब..हमने दीक्षा लैलई है" उसने सर झुका कर कहा।– "तो अब काम नहीं करेगा, दूसरा नौकर देखूँ?"....

---काम तो करें बाबूजी नईं तो पेट कैसे भरे। ..

वह तन से नही मन से भी जोगी हो गया था शायद, काम करता और जब फुर्सत में होता टूटे फूटे भजन या कबीर के पद गाता रहता, न अब वह किसी के उपहास का पात्र था न क्रोध का, हाँ कभी-कभी उस पर दया अवश्य आती थी। बहुत से लोग उसे बाबा जी भी कहने लगे थे। सीमा का चाय का धंधा भी चल निकला था,कल्लू फिर लौट कर नहीं आया।

*****

बंसी की इतनी ही कहांनी मालूम थी मुझे,क्योंकि उन्ही दिनों मैं बैंक की नौकरी छोड़ कर एक मल्टीनेशनल में आ गया था,अतः वह शहर भी छूट गया,कुछ दिनों तक तो अग्रवाल साहब से फोन पर औपचारिक बातें होती रहीं, फिर वह क्रम भी टूट गया,पर आज लगभग दस वर्षों बाद

उस शहर से पाँच सौ किलोमीटर दूर इस छोटे से शहर में बंसी की शक्ल के उस आदमी को देखकर सारी घटनाएँ फिर जीवन्त हो उठीं... अजीब उलझन ने मन को घेर लिया, वही शक्ल सूरत वही कद काठी...आखिर बंसी की शक्ल का कौन हो सकता है....। घर पहुँच कर सबसे पहले अगवाल साहब को फोन मिलाया, वर्षो बाद मुझसे बात करके वे खुश हुए, औपचारिक बातों के बाद मैंने दबे स्वर से बंसी के बारे में पूछा, उन्होंने जो बताया वह विचित्र और अविश्वनीय सा लगा। कहानी में अजब मोड़ आ गया था। .

... .बंसी बाबा बन कर सन्तुष्ट था, अपने काम करना, भजन गाना यही उसकी दिनचर्या के अंग बन चुके थे,साल भर तक यही ढर्रा चलता रहा, सीमा से भी नही बोलता था,पर उसकी किस्मत भी विधाता ने पता नहीं किस स्याही से लिखी थी, उसके शांत जीवन में फिर भूचाल आ गया; अचानक एक दिन कल्लू वापस लौट आया, शायद बंसी की बीबी से उसका मन भर चुका था या उसे कहीं बेच आया था, उसे देखते ही बंसी के अंदर सुप्त पड़ा क्रोध का ज्वालामुखी फिर फूट पड़ा, वह एक लाठी लेकर गया और कल्लू पर टूट पड़ा, दोनों में जम कर झगड़ा हुआ पर बंसी कमजोर था, देह में ताकत ही नहीं थी, सो वह खूब पिटा, लुहलुहान हो गया, सीमा उसे बचाने के लिए बीच में कूद पड़ी तो उसे भी कल्लू ने जम कर पीटा और खरी खोटी सुनायी,सरे आम उसके चरित्र की धज्जियाँ उड़ायी, उसके और बंसी के बीच गलत सम्बन्ध के आरोप लगाए, सीमा भी बंसी का पक्ष लेकर कल्लू से उलझ गयी। उसने उस दिन कल्लू को जी भरकर गालियाँ दीं, इतना ही नहीं इसी बीच किसी ने पुलिस को खबर कर दी, पुलिस देखते ही कल्लू भाग गया। सीमा घायल बंसी को अपने झोपड़े के अंदर ले गयी उसके घावों पर तेल लगाया, चोट पर हल्दी लगायी, उस रात के बाद किसी ने न सीमा को देखा, न बंसी को। सुबह झोपड़े में बंसी के जोगिया कपड़ों के अलावा कोई भी सामान नहीं मिला।

“इसका अर्थ है बंसी सीमा को लेकर भाग गया कहीं?”.अग्रवाल साहब फोन पर ही हँसे “अरे मैनेजर साब बंसी भला किसी को क्या भगाता, वो सीमा ही बंसी को भगा ले गयी होगी। मैने पुलिस में बंसी की गुमशुदगी की रिपोर्ट लिखा दी थी ताकि मैं किसी पचड़े में न फँसूँ। “औऱ कल्लू,उसका क्या हुआ? वह लौटा कि नही?”... मैंने जिज्ञासा व्यक्त की।

“कल्लू....” वे फिर हँसे, “हाँ वह लौट आया था और कई दिनों तक गुस्से में पागल हाथी की तरह चाकू लिये दोनों को मारने को घूमता रहा, दोनों को तलाशता रहा,पर वे कहीं नहीं मिले, अब उसने जोगिया कपड़े पहन लिए हैं और बाबा बन कर रिक्शा चला रहा है”....कह कर वे फिर खिलखिला कर हँसे,और सहज प्रश्न किया.”पर आज आपको बंसी की याद कैसे आ गयी ?”

मैं क्या बताता कि मैने बंसी की शक्ल के किसी आदमी को देखा है, मैंने इतना ही कहा- ”कुछ नहीं बस..यूँ हीं पूछ लिया....” इतना कह कर मैंने फोन काट दिया।

सोच रहा हूँ एक बार उस छोटे स्टेशन पर जाकर उस चाय वाले से मिल तो लूँ।

-डॉ. शिवजी श्रीवास्तव

विनीता तिवारी

अलवर, राजस्थान में जन्मीं तथा पिछले दो दशक से वर्जीनिया, अमेरिका में रह रहीं और ग़ज़ल विधा में सृजनशील विनीता तिवारी बतौर हिन्दी अध्यापिका कार्यरत हैं। एक काव्य-संग्रह "दिल से दिल तक" प्रकाशित। हिन्दी अकादमी, मुम्बई द्वारा श्रीमती मृदुला सिन्हा स्मृति सम्मान तथा गोपिओ वर्जीनिया, अमेरिका द्वारा- *Excellence in Art and Culture* सम्मान सहित देश-विदेश की कई संस्थाओं द्वारा सम्मानित/पुरस्कृत।

ईमेल - vinu_t@hotmail.com

ग़ज़ल

-विनीता तिवारी

1.

ज़िंदगी की तलाश जारी है।
जाने कैसी लगी बिमारी है।

घिस गईं एड़ियाँ पड़े छाले,
फिर भी चलने की ज़िद हमारी है।

काम आया नहीं कोई पैबँद,
उधड़ी उधड़ी सी रिश्तेदारी है।

जिसको देखा नहीं, न जाना ही,
ज़ीस्त ये सारी उसपे वारी है।

ढेर मंज़र थे सामने बिखरे,
कहीं दाता कहीं भिखारी है।

कुछ मेरे ख़्वाब भी है धुंधले से,
और कुछ घर की ज़िम्मेदारी है।

2.

बसर ज़िंदगी यूँ किये जा रहे हैं।
न सपने न अपने, जिये जा रहे हैं।

मेरे पास दौलत, न दुनिया है यारों,
फ़क़त आँसुओं को पिये जा रहे हैं।

बताने की कोशिश बहुत की मगर वो,
लबों से लबों को सिये जा रहे हैं।

यहाँ दर्द बिकता है, बिकती हैं ख़ुशियाँ
लिये जा रहे हैं दिये जा रहे हैं।

रहे कल तलक सीखते जो हमीं से,
नसीहत वही अब दिये जा रहे हैं।

ये मुल्ला ये पंडित महज़ कारोबारी,
हिसाबों में गड़बड़ किये जा रहे हैं।

3.

अपने मंदिर अपने गिरजे को संभाले रखना।
साथ इंसानियत को दिल मे खंगाले रखना।

कौन जाने किस इरादे से मिले थे वो कल
अपनी क़िस्मत को दुआओं के हवाले रखना।

कब मैं छप जाऊँ किताबों में कहानी बनकर
अपने घर में, अपने दफ़्तर में, रिसाले रखना।

जानती हूँ तेरा मिलना तो नहीं है मुमकिन
फिर भी उम्मीदों से भरकर दो पियाले रखना।

भूख ना जाने किसे कैसे किधर ले जाए
पेटभर खाने खिलाने को निवाले रखना।
जीत जाएँगे मुसीबत से महज़ लम्हों में
अपने बच्चों के खिलौनों में शिवाले रखना।

4.

जवानी दिवानी, मुखर है, निडर है।
न माने किसी की अगर और मगर है।

जला डालते हैं वो ख़ुद अपना ही घर
मुहब्बत में नाकामियों का असर है।

कभी आईने को उठाकर तो देखो
कि ख़ुद की नज़र से भला कैसा डर है?

निभाने को कोई तअ'ल्लुक़ न रिश्ता
वसीयत पे लेकिन सभी की नज़र है।

बना कर मिरे इश्क़ को इक तमाशा
वो कहते हैं उनको नहीं कुछ ख़बर है।

ग़रीबी बढ़ी, नौकरी के हैं लाले
तरक़्क़ी की जाने ये कैसी डगर है?

न खिड़की न दीवार, छत है न आँगन
मुहब्बत जहां है वहीं पर बसर है।

5.

रहमतों पर पला नहीं जाता।
सबके माफ़िक़ ढला नहीं जाता।

तुम जो चाहो बिगाड़ लो मेरा,
मुझसे ख़ुद को छला नहीं जाता।

फ़र्क़ दिल में रहा दिमाग में भी,
उम्र का फ़ासला नहीं जाता।

जा रहे चाँद पे, सितारों पे,
दिल से दिल तक चला नहीं जाता।

आना जाना लगा ही रहता है,
कौन आकर भला नहीं जाता?

-विनीता तिवारी

सूर्य कान्त शर्मा

वर्तमान समय में दिल्ली निवासी और भारत सरकार के प्रकाशन विभाग में वरिष्ठ अधिकारी रहे सूर्य कान्त शर्मा जी कवि, लेखक, समीक्षक, स्तंभकार तथा पत्रकार हैं। अनुवाद के क्षेत्र में लगातार सक्रिय रहे सूर्य कान्त शर्मा जी की कविताएँ, बाल साहित्य और विज्ञान केंद्रित आलेख और पुस्तक समीक्षा प्रकाशित हैं। आकाशवाणी में काव्य प्रस्तुति और गोष्ठी संचालन सहित दूरदर्शन में भी बतौर प्रस्तोता और स्क्रिप्ट राइटर कार्यरत रहे हैं।

ईमेल - suryakant.sharma1902@gmail.com

अनाम वीरांगना नीरा आर्या

-सूर्य कान्त शर्मा

"प्रकृति जब बड़े कार्यों के लिए जन्म देती है तो इसकी नींव पहले ही तैयार कर देती है। नीरा आर्या और भाई बसंत कुमार बहुत ही छोटी उम्र में अनाथ हो गए थे। आगे चलकर यही दोनों बहन-भाई आजाद हिंद फौज में भर्ती होकर देश की स्वतंत्रता और आन-बान - शान के लिए जीवनपर्यंत लड़े...।"

आज जब देश आजादी के अमृत महोत्सव के लगभग अंतिम सोपान पर है, ऐसे कालखंड में अपने अनुपम स्वतंत्रता संग्राम के अनाम वीरों और वीरांगनाओं का स्मरण करना, वर्तमान का कर्तव्य है।

पीढ़ियाँ लगीं इस देश को आजाद होने में और पीढ़ियाँ गुजर रही हैं, इस देश को आजाद रहते देखने में... पर यह आजादी कैसे, कब, कहाँ और किन मूल्यों पर और बलिदानों पर मिली, इस बात को बताने के लिए वे धीर-वीर सेनानी हमारे बीच नहीं हैं, पर उनके कार्य, उनका बलिदान आज भी शेष है। ऐसे गुमनाम सेनानियों में एक नाम

है महान बलिदानी आदरणीया नीरा आर्या का। बँगाल के बारे में एक और खास बात है कि यहाँ के सेनानियों ने अँग्रेजों को बुद्धि और कूटनीतिक बल से अनेक बार धूल चटाकर एहसास दिलाया था कि धोखेबाजी और वीरता में दिन-रात जैसा अंतर होता है। अँग्रेज अपने आपको बहुत ही बुद्धिमान कौम मानते थे, उनका यह भ्रम हमारे स्वतंत्रता सेनानियों, वैज्ञानिकों, समाज-विज्ञानियों और आमजन ने समय- समय पर दर्शनीय अंदाज में तोड़ा। बस कमी रही तो आपसी समन्वय की।

नीरा आर्या की प्रारंभिक शिक्षा कलकत्ता के पास के ग्राम भगवानपुर में हुई। इनके प्रारंभिक शिक्षक का नाम श्री बनी घोष था, जिन्होंने इन्हें संस्कृत भाषा का ज्ञान दिया। उसके बाद की शिक्षा कोलकाता में हुई। ये कई भाषाओं यथा हिंदी, अंग्रेजी और बांग्ला भाषा के अतिरिक्त भी अन्य भाषाओं में प्रवीण थीं। बंग भूमि की गोद में पली-बढ़ी यह हमारी वीरांगना देशप्रेम में पग चुकी थीं और संपन्न माता-पिता ने उस समय के अनुसार इनका विवाह बरतानिया पुलिस के अधिकारी श्रीकांत जय रंजन दास से कर दिया और इधर हमारी स्वातंत्र्य नेत्री वीर सुभाष चन्द्र बोस की भक्त बन चुकी थीं।

भारत के स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास की एक ऐसी वीरांगना जिसने तन-मन-धन सभी कुछ इस देश को आजाद देखने के लिए न्योछावर कर दिया और बदले में कभी कुछ न माँगा, न स्वीकारा और न हमारे गणतंत्र के शीर्षस्थ राजनेताओं से कोई मनुहार की, न उनसे अनुनय-विनय की कि- माता आपके ऋण से कुछ तो इस देश को उऋण हो लेने दो।

ऐसी वीरांगना नीरा आर्या का जन्म 05 मार्च, 1902 को खेकड़ा कस्बे में हुआ। वर्तमान में खेकड़ा कस्बा उत्तर-प्रदेश के बागपत जिले में है। प्रकृति जब बड़े कार्यों के लिए जन्म देती है तो इसकी नींव पहले ही तैयार कर देती है। नीरा आर्या और भाई बसंत कुमार बहुत ही छोटी उम्र में अनाथ हो गए थे। आगे चलकर यही दोनों बहन-भाई आजाद हिंद फौज में भर्ती होकर देश की स्वतंत्रता और आन-बान - शान के लिए जीवनपर्यंत लड़े। इन दोनों के धर्म पिता सेठ छज्जूमल बड़े ही देशभक्त थे और उनका व्यापार देश के काफी बड़े हिस्से में और कलकत्ता तक फैला था। उन्होंने ही नीरा आर्या और इनके भाई वसंत कुमार को पाला-पोसा। पैसे, शोहरत और रसूख की कोई कमी न थी। कोलकाता उस समय सांस्कृतिक रूप से बेहद धनाढ्य शहर था, इसलिए नीरा आर्या की शिक्षा-दीक्षा भी इसी संस्कृति में हुई। अगर बँगाल की बात करें और वह भी उस वक्त की, तो यह शहर अपने आप में एक संपूर्ण, जीता-जागता सांस्कृतिक केंद्र था। वीरांगना नीरा आर्या अंग्रेजों को शस्त्र-क्रांति यानी सैन्य शक्ति से निकाल बाहर करना चाहती थीं। इसीलिए आई.एन.ए. की रानी झाँसी रेजिमेंट में शामिल हो गई।

नीरा आर्या के पति, जो कि ब्रिटिश पुलिस में इंस्पेक्टर और अंग्रेजों के अंध-भक्त थे, की अंध-भक्ति और चापलूसी के चलते अंग्रेज सरकार ने वीर सुभाष चंद्र बोस की जासूसी करने और उनकी हत्या करने के कुत्सित और घृणित कार्य में नीरा आर्या के पति श्रीकांत जय रंजन दास को लगा दिया था।

ब्रिटिश पुलिस का इंस्पेक्टर देश-द्रोही श्रीकांत जय रंजन दास रात-दिन वीर शिरोमणि सुभाष

बाबू की जासूसी में जुनून की हद तक लगा रहता था,और वीरांगना नीरा आर्या भारत माता की बेड़ियों को काटने को हर समय, हर क्षण तत्पर रहती थीं। देश-द्रोही श्रीकांत जय रंजन दास को जब यह पता लगा कि उसकी पत्नी यानी नीरा आर्या नेताजी सुभाष चंद्र बोस के करीबियों में से एक हैं, तो उस शैतान ने इन पर अपने पति होने का हक और अंग्रेजों के घृणित कुकृत्य को पूरा करने हेतु दबाव बनाना शुरु कर दिया। इससे सतर्क होकर नीरा आर्या जासूसी अवतार में आ गईं और अपने पति की हर हरकत पर कड़ी नजर रखने लगीं। वह भी इस शाइस्तगी से कि एक हाथ का पता दूसरे हाथ को भी न चले कि क्या, कब, कैसे जासूसी हो रही है। नीरा आर्या को स्वतंत्रता संग्राम की प्रथम महिला जासूस कह सकते हैं।

सुभाष चंद्र बोस, जिन्हें उनके सहयोगी बड़े प्रेम और आदर से 'सुभाष बाबू' कहते थे, उनकी चौकन्नी और चपल गतिविधियों से अँग्रेज सरकार बहुत परेशान थी और उन्हें किसी भी तरह अपने रास्ते से हटाना चाहती थी। श्रीकांत जय रंजन दास भी नेताजी के पीछे लगा था। इसकी जानकारी नीरा आर्या को भी थी।

एक बार नेताजी सुभाष चंद्र बोस अपने शिविर में थे, उनका ड्राइवर उनके साथ ही था। अँग्रेज भक्त इंस्पेक्टर श्रीकांत जयरंजन दास को पता लग चुका था कि नेताजी पास ही में हैं। मौका पाते ही वह वहाँ पहुँच गया और उसने अपनी सर्विस रिवॉल्वर से नेता जी पर गोली दाग दी। वह गोली नेताजी के ड्राइवर को लगी। उधर साथ-ही-साथ उस शैतान इंस्पेक्टर का भी अंत एक दर्दनाक चीख के साथ उसी वक्त हो गया।

"उस शैतान इंस्पेक्टर का भी अंत एक दर्दनाक चीख के साथ उसी वक्त हो गया। यूँ तो सर्विस रिवॉल्वर में एक से ज्यादा गोलियाँ होती हैं, एक गोली का निशाना चूक जाने पर वह तत्काल दूसरी गोली चला सकता था लेकिन ऐसा संभव नहीं हो पाया क्योंकि नीरा आर्या पूरी तरह चौकन्नी थीं, उन्होंने शेरनी की गति से तत्काल अपनी बंदूक की संगीन अपने पति के पेट में घोंपकर उसका प्राणांत कर दिया।"

यूँ तो सर्विस रिवॉल्वर में एक से ज्यादा गोलियाँ होती हैं, एक गोली का निशाना चूक जाने पर वह तत्काल दूसरी गोली चला सकता था लेकिन ऐसा संभव नहीं हो पाया क्योंकि नीरा आर्या पूरी तरह चौकन्नी थीं, उन्होंने शेरनी की गति से तत्काल अपनी बंदूक की संगीन अपने पति के पेट में घोंपकर उसका प्राणांत कर दिया। बहुत ही कठिन होता है ऐसा निर्णय ले पाना और वह भी उस देश-काल की मनःस्थिति में कि कोई पत्नी अपने हाथ से पति को मौत के घाट उतारे और अपने सुहाग के सिंदूर को स्वयं ही माँ काली की तरह पोंछ डाले...! यह भी हमारी भारतीय संस्कृति में पली-बढ़ी ललनाओं का गुण है।

सुभाष बाबू मौत के मुख में जाते-जाते बच गए। कहते हैं कि नेताजी ने इस घटना से प्रेरित होकर इन्हें 'नागिनी नीरा' कहा, तब से इन्हें 'नागिनी

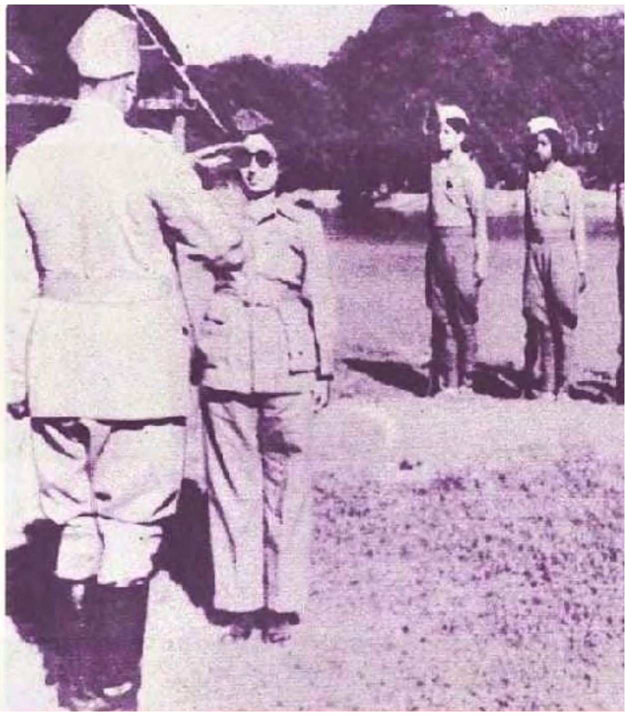

नीरा के नाम से भी जाना जाता है।
आज़ाद हिंद फौज के सेनानियों पर लाल किले में मुकदमा चला और बचे हुए सभी लोगों को छोड़ दिया गया, सिवाय नीरा आर्या के। अँग्रेजों को यह पक्का विश्वास था कि वे वीर सुभाष चंद्र बोस के ठिकाने का पता जानती हैं। इसके अलावा अँग्रेज सरकार को यह भी संदेश देना था कि सरकारी अधिकारी का कत्ल करने वाले का क्या हश्र होता है। उन्हें काले पानी यानी अंडमान की सेलुलर जेल में डाल दिया गया। अपने आप को संसार की सबसे बुद्धिमान, न्यायप्रिय और सुसंस्कृत कौम बताने वाली अँग्रेज सरकार का तब शुरू हुआ अमानवीय कुकृत्यों का अंतहीन सिलसिला, जिसे सुनकर ही कठोर से कठोर हृदय द्रवित हो उठता है।

अँग्रेजों को नेताजी सुभाष चंद्र बोस की विमान दुर्घटना में मृत्यु पर कतई विश्वास नहीं था, वरन पूरा शक था कि नीरा आर्या उनकी निकट सहयोगी रही हैं। वे उनके बारे में जानती हैं। अतः उस विकृत मानसिकता वाले जेलर ने जल्लाद को उनकी कसी हुई बेड़ियों को कटवाने हेतु बुलवाया और प्रलोभन दिया कि अगर वह जिंदा रहना चाहती हैं तो वे नेताजी का पता बता दें। इस पर उस महान बलिदानी ने कहा कि "हाँ जानती हूँ कि हमारे नेताजी सुभाषचंद्र बोस कहाँ रहते हैं, पर नहीं बताऊँगी।" तब अँग्रेज जेलर के इशारे पर जल्लाद ने बेड़ियाँ काटने के बहाने उनके हाथ और पैरों की खाल उधेड़ दी। जब इस अविचल सेनानी ने कहा कि- "नेताजी यहाँ मेरे दिल में रहते हैं", तब उस शैतान जेलर ने हैवानियत की सारी हदें पार करते हुए ब्रेस्ट रिपर से उनके मातृत्व और नारीत्व को अमृत प्रदान करने वाले अंगों को काट डालने का प्रयास किया। इस पर भी यह वीरता की प्रतिमूर्ति क्रूर अँग्रेज शासन के समक्ष नहीं झुकी।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात आदरणीया नीरा आर्या ने बड़ी ही खुद्दारी का कठोर जीवन जिया और घोर गरीबी में फूल बेचकर अपना जीवनयापन

किया। वे हैदराबाद में रहती थीं। यहाँ के स्थानीय निवासी उन्हें स्नेह और आदर से 'पेदम्मा' कहा करते थे। कहा जाता है कि इन्होंने अपनी आत्म-कथा भी लिखी थी। एक और अनाम सच कि नीरा आर्या और इनके भाई बसंत कुमार के जीवन पर कई लोक गायकों ने काव्य संग्रह एवं भजन भी लिखे हैं।

जीवनभर इन्होंने कोई सरकारी सहायता नहीं स्वीकार की। अंततः 26 जुलाई 1998 को इनकी मृत्यु हैदराबाद के उस्मानिया अस्पताल में बेसहारा महिला के रूप में हुई।

स्वतंत्रता संग्राम में नीरा आर्या जैसी न जाने कितनी वीरांगनाओं ने देश हित में अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया। स्वतंत्रता संग्राम के इस महायज्ञ नें न जाने कितने अनाम वीरों और वीरांगनाओं ने अपने प्राण न्यौछावर कर दिए.... उन्हें नमन... उनकी अनाम स्मृति को नमन...।

-सूर्य कान्त शर्मा

In Search of myself-III
Water color on paper
8.5x12 inch, Vijendra S Vij, 2022

संगीता ज़ैदी

टीकमगढ़, मध्य प्रदेश में जन्मीं तथा वर्तमान समय में दिल्ली में रह रहीं श्रीमती संगीता ज़ैदी, एम.एस.सी. (कैमिस्ट्री) डिग्री धारी हैं, इनकी शिक्षा-दीक्षा भोपाल (म० प्र०) में हुई। केन्द्रीय विद्यालय दिल्ली कैंट नं. 4 में प्राचार्य पद पर कार्यरत संगीता जी विज्ञान और हिंदी साहित्य से जुड़े विषयों पर लेख एवं कविताएँ लिखती हैं। अनेक लेख तथा कुछ कविताएँ, केंद्रीय विद्यालय संगठन की पत्रिका एवं अन्य पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं।

ईमेल - sangeetaz09@gmail.com

कविता

-संगीता ज़ैदी

मैं कल भी सुन्दर थी, आज भी सुन्दर हूँ और...

मैं तब भी सुन्दर थी
जब दूध पीते हुए
मुँह से गिर जाता था
कोई साफ़ न करता था तो
मुँह गंदा ही रह जाता था
मैं तब भी सुन्दर थी!

जब खुद से खाना खाते मुँह में कम
चेहर पर ज़्यादा जाता था
मैं तब भी सुन्दर थी!

जब घुटने पर घिसटते-चलते-खेलते
सारा शरीर गंदा हो जाता था
मैं तब भी सुन्दर थी!

जब बड़े होते हुए बड़ों की तरह दिखने में
बेढँगा मेकअप हो जाता था
मैं तब भी सुन्दर थी!

जब पढ़ते-पढ़ते
अपना होश नहीं रह जाता था
खाना, पीना और सोना
मन को नहीं भाता था
मैं तब भी सुन्दर थी!

जब सबके सपने चुनते-बुनते
अपने सपनों को बिन देखे ही छोड़ दिया
मैं तब भी सुन्दर थी!

जब 'तुम सुन्दर हो ही नहीं'
सुनते-सुनते
ये सबसे सुनना छोड़ दिया
मैं तब भी सुन्दर थी!

जब नए जीवन के सपने
और ज़िम्मेदारी में कर्तव्यों को चुन
सजना-सँवरना छोड़ दिया

मैं तब भी सुन्दर थी!

जब बच्चों के बाल बनाते-बनाते
अपने बालों को उलझा छोड़ दिया
मैँ तब भी सुन्दर थी
और अब भी सुन्दर हूँ
और हमेशा रहूँगी

क्योंकि सुन्दरता एक एहसास है
जो मुझमें होना चाहिए
सुन्दरता आत्मविश्वास है
जो मुझमें होना चाहिए
सुन्दरता तन के साथ मन की है
जो मुझमें होना चाहिए
सुन्दरता ज़िम्मेदारी का एहसास है
जो मुझमें होना चाहिए

जो मुझमें होना चाहिए
वो मुझमें है
इसलिए
मैं कल भी सुन्दर थी
आज भी सुन्दर हूँ
और कल भी.....।

-संगीता ज़ैदी

Pengawan, Madhya Pradesh, 2020, Oil on Canvas, 60x72 inch, Aban Raza

साहित्यिक विरासत से

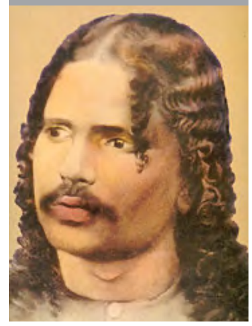

आधुनिक हिंदी के जन्मदाता भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, भारत की आजादी के लिए, हिंदी के विकास के लिए, भारतीय संस्कृति के लिए और हिंदी साहित्य की विभिन्न विधाओं को गति प्रदान करने के लिए जीवन भर चिंतित रहे और अपने स्तर से इन सभी क्षेत्रों में अभूतपूर्ण कार्य करते रहे। उनका रचना संसार जितना विराट है, उतना ही क्रांतिकारी भी है। उन्होंने साहित्य की गद्य-पद्य की किसी भी विधा को अछूता नहीं छोड़ा, सभी में सृजन किया। वे अपनी रचनाओं में भारत की उन्नति के सपने ही नहीं देखते थे बल्कि अपने साहित्य में अपने भाषणों में भी इसे प्रभावशाली ढँग से प्रस्तुत करते थे। बलिया में प्रतिवर्ष लगने वाले ददरी के प्रसिद्ध मेले में सन् 1884 में उन्होंने अपना अभूतपूर्व भाषण दिया। भारतेन्दु जी के उस प्रसिद्ध और ऐतिहासिक भाषण को अनन्य में प्रकाशित किया जा रहा है, इसे पढ़ें और विचार करें कि उनके इस भाषण का कितने प्रतिशत अंश आज भी प्रासंगिक है।

आश्चर्य होता है कि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र को मात्र 34 वर्ष 6 माह का जीवन मिला, इतनी अल्प अवधि में वे इतना साहित्य हमें दे गए हैं जितना कोई 200 वर्ष में भी शायद ही लिख सके।
['भारतवर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है?'- यह भाषण सन् 1884 में बलिया के ददरी मेले में 'आर्य देशोपकारिणी' सभा में दिया गया भाषण है। बाद में नवोदिता हरिश्चन्द्र चन्द्रिका में दिसम्बर 1884 ई. मे छपा।... भाषा में शब्दों की वर्तनी को ज्यों का त्यों रखा गया है।]

-डॉ. जगदीश व्योम, सम्पादक

भारतवर्ष की उन्नति कैसे हो सकती है ?

-भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

"पहले भी जब आर्य लोग हिंदुस्तान में आकर बसे थे, राजा और ब्राह्मणों ही के जिम्मे यह काम था कि देश में नाना प्रकार की विद्या और नीति फैलावैं और अब भी ये लोग चाहैं तो हिंदुस्तान प्रतिदिन कौन कहै प्रतिछिन बढ़ै। पर इन्हीं लोगों को सारे संसार के निकम्मेपन ने घेर रखा है..।"

आज बड़े ही आनंद का दिन है कि इस छोटे से नगर बलिया में हम इतने मनुष्यों को बड़े उत्साह से एक स्थान पर देखते हैं। इस अभागे आलसी देश में जो कुछ हो जाय वही बहुत कुछ है। बनारस ऐसे ऐसे बड़े नगरों में जब कुछ नहीं होता तो यह हम क्यों न कहेंगे कि बलिया में जो कुछ हमने देखा वह बहुत ही प्रशंसा के योग्य है। इस उत्साह का मूल कारण जो हमने खोजा तो प्रगट हो गया कि इस देश के भाग्य से आजकल यहाँ सारा समाज ही ऐसा एकत्र है।

जहाँ राबर्ट्स साहब बहादुर ऐसे कलेक्टर हों वहाँ क्यों न ऐसा समाज हो। जिस देश और काल में ईश्वर ने अकबर को उत्पन्न किया था उसी में अबुलफजल, बीरबल, टोडरमल को भी उत्पन्न किया। यहाँ राबर्ट्स साहब अकबर हैं तो मुंशी चतुर्भुज सहाय, मुंशी बिहारीलाल साहब आदि अबुलफजल और टोडरमल हैं। हमारे हिंदुस्तानी लोग तो रेल की गाड़ी हैं। यद्यपि फर्स्ट क्लास, सेकेंड क्लास आदि गाड़ी बहुत अच्छी-अच्छी और बड़े-बड़े महसूल की इस ट्रेन में लगी हैं पर बिना इंजिन ये सब नहीं चल सकतीं, वैसे ही हिन्दुस्तानी लोगों को कोई चलानेवाला हो तो ये क्या नहीं कर सकते। इनसे इतना कह दीजिए- "का चुप साधि रहा बलवाना", फिर देखिए हनुमानजी को अपना बल कैसा याद आ जाता है। बल कौन दिलावै। या हिंदुस्तानी राजे महाराजे नवाब रईस या हाकिम। राजे-महाराजों को अपनी पूजा भोजन झूठी गप से छुट्टी नहीं। हाकिमों को कुछ तो सर्कारी काम घेरे रहता है, कुछ बॉल, घुड़दौड़, थिएटर, अखबार में समय गया। कुछ बचा भी तो उनको क्या गरज है कि हम गरीब गंदे काले आदमियों से मिलकर अपना अनमोल समय खोवैं। बस वही मसल हुई- 'तुमें गैरों से कब फुरसत हम अपने गम से कब खाली। चलो बस हो चुका मिलना न हम खाली न तुम खाली।' तीन मेंढक एक के ऊपर एक बैठे थे। ऊपरवाले ने कहा 'जौक शौक', बीचवाला बोला 'गुम सुम', सब के नीचे वाला पुकारा 'गए हम'। सो हिन्दुस्तान की साधारण प्रजा की दशा यही है, गए हम।

पहले भी जब आर्य लोग हिंदुस्तान में आकर बसे थे, राजा और ब्राह्मणों ही के जिम्मे यह काम था कि देश में नाना प्रकार की विद्या और नीति फैलावैं और अब भी ये लोग चाहैं तो हिंदुस्तान प्रतिदिन कौन कहै प्रतिछिन बढ़ै। पर इन्हीं लोगों को सारे संसार के निकम्मेपन ने घेर रखा है। **"बोद्धारो मत्सरग्रस्ता प्रभव : स्मरदूषिता:।"** हम नहीं समझते कि इनको लाज भी क्यों नहीं आती कि उस समय में जब इनके पुरुषों के पास कोई भी सामान नहीं था तब उन लोगों ने जंगल में पत्ते और मिट्टी की कुटियों में बैठ करके बाँस की नलियों से जो तारा ग्रह आदि वेध करके उनकी गति लिखी है वह ऐसी ठीक है कि सोलह लाख रुपए के लागत की विलायत में जो दूरबीनें बनी हैं उनसे उन ग्रहों को वेध करने में भी वही गति ठीक आती है और जब आज में हम लोगों को अंगरेजी विद्या की और जगत की उन्नति की कृपा से लाखों पुस्तकें और हजारों यंत्र तैयार हैं तब हम लोग निरी चुंगी की कतवार फेंकने की गाड़ी बन रहे हैं। यह समय ऐसा है कि आज तुरकी ताजी सब सरपट्ट दौड़े जाते हैं । सबके जी में यही है पाला हमीं पहले छू लें। उस समय हिंदू काठियावाड़ी खाली खड़े खड़े टाप से मिट्टी खोदते हैं। इनको औरों को जाने दीजिए, जापानी टट्टुओं को हाँफते हुए दौड़ते देखकर भी लाज नहीं आती । यह समय ऐसा है कि जो पीछे रह जायगा फिर कोटि उपाय किए भी आगे न बढ़ सकैगा । इस लूट में, इस बरसात में भी जिसके सिर पर कमबख्ती का छाता और आँखों में मूखर्ता की पट्टी बँधी रहे उन पर ईश्वर का कोप ही कहना चाहिए।

मुझको मेरे मित्रों ने कहा था कि तुम इस विषय पर आज कुछ कहो कि हिन्दुस्तान की कैसे उन्नति हो सकती है। भला इस विषय पर मैं और क्या कहूँ। भागवत में एक श्लोक है- "नृदेहमाद्यं

सुलभं सुदुर्लभं प्लवं सुकल्पं गुरु। कर्णधार। मयाऽनुकूलेन नभ: स्वतेरितुं पुमान् भवाब्धिं न तरेत स आत्महा।" भगवान कहते हैं कि पहले तो मनुष्य जनम ही बड़ा दुर्लभ है, सो मिला और उस पर गुरु की कृपा और मेरी अनुकूलता। इतना सामान पाकर भी जो मनुष्य इस संसार सागर के पार न जाय उसको आत्म हत्यारा कहना चाहिए। वही दशा इस समय हिंदुस्तान की है। अंगरेजों के राज्य में सब प्रकार का सामान पाकर अवसर पाकर भी हम लोग जो इस समय पर उन्नति न करें तो हमारा केवल अभाग्य और परमेश्वर का कोप ही है। सास के अनुमोदन से एकांत रात में सूने रंगमहल में जाकर भी बहुत दिन से जिस प्रान से प्यार परदेसी पति से मिलकर छाती ठंडी करने की इच्छा थी, उसका लाज से मुँह भी न देखै और बोलैं भी न तो उसका अभाग्य ही है। वह तो कल फिर परदेश चला जायगा। वैसे ही अंगरेजों के राज्य में भी हम कुँए के मेंढ़क, काठ के उल्लू, पिंजड़े के गंगाराम ही रहें तो हमारी कमबख्त कमबख्ती फिर कमबख्ती है।

बहुत लोग यह कहेंगे कि हमको पेट के धंधे के मारे छुट्टी ही नहीं रहती बाबा, हम क्या उन्नति करें ? तुम्हारा पेट भरा है तुमको दूर की सूझती है। यह कहना उनकी बहुत भूल है। इंगलैंड का पेट भी कभी यों ही खाली था। उसने एक हाथ से अपना पेट भरा, दूसरे हाथ से उन्नति की राह के काँटों को साफ किया। क्या इंगलैंड में किसान, खेतवाले, गाड़ीवान, मजदूर, कोचवान आदि नहीं है ? किसी देश में भी सभी पेट भरे हुए नहीं होते। किंतु वे लोग जहाँ खेत जोतते बोते हैं वहीं उसके साथ यह भी सोचते हैं कि ऐसी और कौन नई कल या मसाला बनावैं जिसमें इस खेती

"चारों ओर आँख उठाकर देखिए तो बिना काम करनेवालों की ही चारों ओर बढ़ती है। रोजगार कहीं कुछ भी नहीं है। अमीरों की मुस्साहबी, दलाली या अमीरों के नौजवान लड़कों को खराब करना या किसी की जमा मार लेना, इनके सिवा बतलाइए और कौन रोजगार है जिससे कुछ रुपया मिलै। चारों ओर दरिद्रता की आग लगी हुई है।..."

में आगे से दूना अन्न उपजै। विलायत में गाड़ी के कोचवान भी अखबार पढ़ते हैं। जब मालिक उतरकर किसी दोस्त के यहाँ गया उसी समय कोचवान ने गद्दी के नीचे से अखबार निकाला। यहाँ उतनी देर कोचवान हुक्का पीएगा या गप्प करेगा। सो गप्प भी निकम्मी। वहाँ के लोग गप्प ही में देश के प्रबंध छाँटते हैं। सिद्धांत यह कि वहाँ के लोगों का यह सिद्धांत है कि एक छिन भी व्यर्थ न जाय। उसके बदले यहाँ के लोगों का निकम्मापन हो उतना ही बड़ा अमीर समझा जाता है। आलस यहाँ इतनी बढ़ गई कि मलूकदास ने दोहा ही बना डाला- "अजगर करै न चाकरी, पंछी करै न काम। दास मलूका कहि गए, सबके दाता राम।" चारों ओर आँख उठाकर देखिए तो बिना काम करनेवालों की ही चारों ओर बढ़ती है। रोजगार कहीं कुछ भी नहीं है। अमीरों की मुस्साहबी, दलाली या अमीरों के नौजवान लड़कों को खराब करना या किसी की जमा मार लेना, इनके सिवा बतलाइए और कौन रोजगार है

जिससे कुछ रुपया मिलै। चारों ओर दरिद्रता की आग लगी हुई है। किसी ने बहुत ठीक कहा है कि दरिद्र कुटुंब इसी तरह अपनी इज्जत को बचाता फिरता है जैसे लाजवती कुल की बहू फटे कपड़ों में अपने अंग को छिपाए जाती है। वही दशा हिंदुसतान की है।

मरदुमशुमारी की रिपार्ट देखने से स्पष्ट होता है कि मनुष्य दिन दिन यहाँ बढ़ते जाते हैं और रुपया दिन दिन कमती होता जाता है । तो अब बिना ऐसा उपाय किए काम नहीं चलैगा कि रुपया भी बढ़ै, और वह रुपया बिना बुद्धि न बढ़ेगा। भाइयो, राजा महाराजों का मुँह मत देखो, मत यह आशा रक्खो कि पंडितजी का में कोई ऐसा उपाय भी बतलावैंगे कि देश का रुपया और बुद्धि बड़े। तुम आप ही कमर कसो, आलस छोड़ो। कबतक अपने को जंगली हूस मूर्ख बोदे डरपोकने पुकरवाओगे'। दौड़ो इस घोड़दौड में जो पीछे पड़े तो फिर कहीं ठिकाना नहीं है। "फिर कब राम जनकपुर ऐहैं"। अबकी जो पीछे पड़े तो फिर रसातल ही पहुँचोगे।

जब पृथ्वीराज को कैद करके गोर ले गए तो शहाबुद्दीन के भाई गियासुद्दीन से किसी ने कहा कि वह शब्दभेदी बाण बहुत अच्छा मारता है। एक दिन सभा नियत हुई और सात लोहे के तावे बाण से फोड़ने को रखे गए। पृथ्वीराज को लोगों ने पहले ही से अंधा कर दिया था। संकेत यह हुआ कि जब गियासुद्दीन हूँ करे तब वह तावों पर बाण मारे, चंद कवि भी उसके साथ कैदी था। यह सामान देखकर उसने यह दोहा पढ़ा- "अबकी चढ़ी कमान, को जानै फिर कब चढ़े। जिनि चुक्के चौहान, इक्के मारय हक्क सर।।" उसका संकेत समझकर जब गियासुद्दीन ने हूँ किया तो पृथ्वीराज ने उसी को बाण से मार दिया। वही बात अब है। अबकी चढ़ी इस समय में सरकार का राज्य पाकर और उन्नति का इतना समय भी तुम लोग अपने को न सुधारो तो तुम्ही रहो। और वह सुधारना भी ऐसा होना चाहिए कि सब बात में उन्नति हो। धर्म में, घर के काम में, बाहर के काम में, रोजगार में, शिष्टाचार में, चाल चलन में, शरीर के बल में, मन के बल में, समाज में, बालक में, युवा में, वृद्ध में, स्त्री में, पुरुष में, अमीर में, गरीब में, भारतवर्ष की सब अवस्था, सब जाति सब देश में उन्नति करो। सब ऐसी बातों को छोड़ो तो तुम्हारे इस पथ के कंटक हों, चाहे तुम्हें लोग निकम्मा करें या नंगा कहैं, कृस्तान कहें या भ्रष्ट कहें। तुम केवल अपने देश की दीनदशा को देखो और उनकी बात मत सुनो ।

अपमान पुरस्कृत्य मानं कृत्वा तु पृष्ठतः।
स्वकार्य्यं साधयेत् धीमान् कार्य्यध्वंसो हि मूर्खता।।

जो लोग अपने को देशहितैषी लगाते हों वह अपने सुख को होम करके, अपने धन और मान का बलिदान करके कमर कस के उठो। देखादेखी थोड़े दिन में सब हो जायगा। अपनी खराबियों के मूल कारणों को खोजो। कोई धर्म की आड़ में, कोई देश की चाल की आड़ में, कोई सुख की आड़ में छिपे हैं। उन चारों को वहाँ वहाँ से पकड़ पकड़ कर लाओ। उनको बाँध-बाँध कर कैद करो। हम इससे बढ़कर क्या कहें कि जैसे तुम्हारे घर में कोई पुरुष व्यभिचार करने आवै तो जिस क्रोध से उसको पकड़कर मारोगे और जहाँ तक तुम्हारे में शक्ति होगी उसका सत्यानाश करोगे। उसी तरह इस समय जो जो बातैं तुम्हारे उन्नति पथ में काँटा हों उनकी जड़ खोद कर फेंक दो।

कुछ मत डरो। जब तक सौ दो सौ मनुष्य बदनाम न होंगे, जात से बाहर न निकाले जायँगे, दरिद्र न हो जायेंगे, कैद न होंगे वरंच जान से न मारे जायँगे तब तक कोई देश भी न सुधरैगा। अब यह प्रश्न होगा कि भाई हम तो जानते ही नहीं कि उन्नति और सुधारना किस चिड़िया का नाम है। किसको अच्छा समझैं ? क्या लें, क्या छोड़ें ? तो कुछ बातें जो इस शीघ्रता में मेरे ध्यान में आती हैं उनको मैं कहता हूँ, सुनो-

सब उन्नतियों का मूल धर्म है। इससे सबके पहले धर्म की ही उन्नति करनी उचित है। देखो, अँगरेजों की धर्मनीति और राजनीति परस्पर मिली है, इससे उनकी दिन दिन कैसी उन्नति है। उनको जाने दो, अपने ही यहाँ देखो ! तुम्हारे यहाँ धर्म की आड़ में नाना प्रकार की नीति, समाज गठन, वैद्यक आदि भरे हुए हैं दो एक मिसाल सुनो। यही तुम्हारा बलिया का मेला और यहाँ स्नान क्यों बनाया गया है ? जिसमें जो लोग कभी आपस में नहीं मिलते, दस दस पाँच-पाँच कोस से वे लोग साल में एक जगह एकत्र होकर आपस में मिलें। एक दूसरे का दु:ख सुख जानैं। गृहस्थी के काम की वह चीजें जो गाँव में नहीं मिलती, यहाँ से ले जायँ। एकादशी का व्रत क्यों रखा है ? जिसमें महीने में दो एक उपवास से शरीर शुद्ध हो जाय। गंगा जी नहाने जाते हो तो पहिले पानी सिर पर चढ़ा कर तब पैर डालने का विधान क्यों है ? जिसमें तलुए से गरमी सिर में चढ़कर विकार न उत्पन्न करे। दीवाली इसी हेतु है कि इसी बहाने साल भर में एक बेर तो सफाई हो जाय। यही तिहवार ही तुम्हारी मानो म्युनिसिपालिटी हैं। ऐसे ही सब पर्व सब तीर्थ व्रत आदि में कोई हिकमत है। उन लोगों ने धर्मनीति और समाजनीति को

"जो जो बातैं तुम्हारे उन्नति पथ में काँटा हों उनकी जड़ खोद कर फेंक दो। कुछ मत डरो। जब तक सौ दो सौ मनुष्य बदनाम न होंगे, जात से बाहर न निकाले जायँगे, दरिद्र न हो जायेंगे, कैद न होंगे वरंच जान से न मारे जायँगे तब तक कोई देश भी न सुधरैगा। अब यह प्रश्न होगा कि भाई हम तो जानते ही नहीं कि उन्नति और सुधारना किस चिड़िया का नाम है।..."

दूध पानी की भाँति मिला दिया है। खराबी जो बीच में भई है वह यह है कि उन लोगों ने ये धर्म क्यों मानन लिखे थे, इसका लोगों ने मतलब नहीं समझा और इन बातों को वास्तविक धर्म मान लिया। भाइयो, वास्तविक धर्म तो केवल परमेश्वर के चरणकमल का भजन है। ये सब तो समाजधर्म हैं जो देशकाल के अनुसार शोधे और बदले जा सकते हैं। दूसरी खराबी यह हुई कि उन्हीं महात्मा बुद्धिमान ऋषियों के वंश के लोगों ने अपने बाप दादों का मतलब न समझकर बहुत से नए नए धर्म बनाकर शास्त्र में धर दिए । बस सभी तिथि व्रत और सभी स्थान तीर्थ हो गए। सो इन बातों को अब एक बेर आँख खोलकर देख और समझ लीजिए कि फलानी बात उन बुद्धिमान ऋषियों ने क्यों बनाई और उनमें देश और काल के जो अनुकूल और उपकारी हो उसको ग्रहण कीजिए बहुत सी बातें जो समाज-विरुद्ध मानी हैं किंतु धर्मशास्त्रों में जिनका विधान

है उनको न चलाइए। जैसे जहाज का सफर, विधवा विवाह आदि। लड़कों को छोटेपन ही में ब्याह करके उनका बल, वीर्य, आयुष्य सब मत घटाइए। आप उनके माँ बाप हैं या उनके शत्रु हैं। वीर्य उनके शरीर में पुष्ट होने दीजिए, विद्या कुछ पढ़ लेने दीजिए, नोन, तेल, लकड़ी की फिक्र करने की बुद्धि सीख लेने दीजिए, तब उनका पैर काठ में डालिए। कुलीन प्रथा, बहुविवाह को दूर कीजिए। लड़कियों को भी पढ़ाइए, किंतु उस चाल से नहीं जैसे आजकल पढ़ाई जाती है जिससे उपकार के बदले बुराई होती है। ऐसी चाल से उनको शिक्षा दीजिए कि वह अपना देश और कुलधर्म सीखें, पति की भक्ति करें, और लड़कों को सहज में शिक्षा दें। वैष्णव शक्ति इत्यादि नाना प्रकार के मत के लोग आपस का बैर छोड़ दें। यह समय इन झगड़ों का नहीं। हिंदू, जैन, मुसलमान सब आपस में मिलिए। जाति में कोई चाहे ऊँच हो चाहे नीचा हो सबका आदर कीजिए, जो जिस योग्य हो उसको वैसा मानिए। छोटी जाति के लोगों को तिरस्कार करके उनका जी मत तोड़िए। सब लोग आपस में मिलिए।

मुसलमान भाइयों को भी उचित है कि इस हिंदूस्तान में बस कर वे लोग हिंदुओं को नीचा समझना छोड़ दें। ठीक भाइयों की भाँति हिंदुओं से बरताव करें। ऐसी बात, जो हिदुओं का जी दुखाने वाला हो, न करें। घर में आग लगै तब जिठानी - द्यौरानी को आपस का डाह छोड़कर एक साथ वह आग बुझानी चाहिए। जो बात हिंदुओं को नहीं मयस्सर हैं वह धर्म के प्रभाव से मुसलमानों को सहज प्राप्त हैं। उनमें जाति नहीं, खाने पीने में चौका चूल्हा नहीं, विलायत जाने में रोक टोक नहीं। फिर भी बड़े ही सोच की बात है, मुसलमानों ने अभी तक अपनी दशा कुछ नहीं सुधारी। अभी तक बहुतों को यही ज्ञान है कि दिल्ली लखनऊ की बादशाहत कायम है। यारो ! वे दिन गए। अब आलस हठधर्मी यह सब छोड़ो। चलो, हिंदुओं के साथ तुम भी दौड़ो, एकाएक दो होंगे। पुरानी बातें दूर करो। मीरहसन की मसनवी और इंदरसभा पढ़ाकर छोटेपन ही से लड़कों को सत्यानाश मत करो। होश सम्हाला नहीं कि पट्टी पार ली, चुस्त कपड़ा पहना और गजल गुनगुनाए। “शौक तिफ्ली से मुझे गुल की जो दीदार का था। न किया हमने गुलिस्ताँ का सबक याद कभी”। भला सोचो कि इस हालत में बड़े होने पर वे लड़के क्यों न बिगड़ेंगे। अपने लड़कों को ऐसी किताबें छूने भी मत दो| अच्छी से अच्छी उनको तालीम दो। पिनशिन और वजीफा या नौकरी का भरोसा छोड़ो। लड़कों को रोजगार सिखलाओ। विलायत भेजो। छोटेपन से मिहनत करने की आदत दिलाओ। सौ सौ महलों के लाड़ प्यार दुनिया से बेखबर रहने की राह मत दिखलाओ।

भाई हिंदुओ ! तुम भी मतमांतर का आग्रह छोड़ा। आपस में प्रेम बढ़ाओ। इस महामंत्र का जप करो। जो हिंदुस्तान में रहे, चाहे किसी रंग किसी जाति का क्यों न हो, वह हिंदू। हिंदू की सहायता करो। बंगाली, मरट्ठा, पंजाबी, मदरासी, वैदिक, जैन, ब्राह्मो, मुसलमान सब एक का हाथ एक पकड़ो। कारीगरी जिसमें तुम्हारे यहाँ बढ़े, तुम्हारा रुपया तुम्हारे ही देश में रहै वह करो। देखो, जैसे हजार धारा होकर गंगा समुद्र में मिली हैं, वैसे ही तुम्हारी लक्ष्मी हजार तरह से इंगलैंड फरासीस, जर्मनी, अमेरिका को जाती हैं। दीआसलाई एस: तुच्छ वस्तु भी वहीं से आती हैं। जरा अपने ही को

देखों। तुम जिस मारकीन की धोती पहने हो वह अमेरिका की बनी है। जिस लंकिलाट का तुम्हारा अंगा है वह इंगलैंड का है। फरासीस की बनी कंघी से तुम सिर झारते हौ और वह जर्मनी की बनी चरबी की बत्ती तुम्हारे सामने बल रही है। यह तो वही मसल हुई कि एक बेफिकरे मँगनी का कपड़ा पहिनकर किसी महफिल में गए। कपड़े की पहिचान कर एक ने कहा, 'अजी यह अंगा फलाने का है'। दूसरा बोला, 'अजी टोपी भी फलाने की है।' तो उन्होंने हँसकर जवाब दिया कि, 'घर की तो मूछें ही मूछें हैं।' हाय अफसोस, तुम ऐसे हो गए कि अपने निज के काम की वस्तु भी नहीं बना सकते। भाइयो, अब तो नींद से चौंको, अपने देश की सब प्रकार उन्नति करो। जिसमें तुम्हारी भलाई हो वैसी किताब पढ़ो, वैसे ही खेल खेलो, वैसी ही बातचीत करो। परदेशी वस्तु और परदेशी भाषा का भरोसा मत रखो। अपने देश में अपनी भाषा में उन्नति करो।

-भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

Passenger Train, Karnataka-2022, Oil on Canvas 48x60 inch, Aban Raza

लोक जीवन से

लोक मानव के पास और कुछ हो न हो, भाषा के स्तर पर वह बहुत समृद्ध है। उसके पास भाषा का ऐसा जीवंत रूप है, जिससे शिष्ट साहित्य अभी भी कोसों दूर है। देखने में भोले-भाले, अनपढ़ गँवार से लगने वाले लोक मानव के पास अपनी नैसर्गिक अभिव्यक्ति के लिए बहुत सटीक और धारदार भाषा है। सुप्रसिद्ध साहित्यकार कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर जी के इस लेख में लोकमानव की बोलचाल की भाषा का एक जीवंत चित्र देखा जा सकता है।
(सम्मेलन पत्रिका लोक संस्कृति अंक से साभार)

-डॉ. जगदीश व्योम, सम्पादक

बोलना उनसे सीखिये , जो पढ़े-लिखे नहीं हैं !

--कन्हैयालाल मिश्र, प्रभाकर

"पहली बात, जो मन में आई, वह थी उस अपढ़ लड़के में मनोवृत्तियों के विश्लेषण की सूक्ष्म और गहरी क्षमता। यह क्षमता उस जीवनशक्ति का प्रदर्शन है, जो सदियों की दासता और संघर्ष में भी मरी नहीं है, दूसरी बात मन में आई यह कि इन अपढ़ बालकों के पास इतनी सरस, सजीव और स्वस्थ भाषा है कि हमारे महामहोपाध्याय इनसे अभी बरसों बोलना सीखें। ..।"

मदमाती मसूरी के तिलक पुस्तकालय से किनक्रेग की उतरती घुमावदार पगडण्डी। उस पर उतरा जा रहा हूँ मैं और मेरे पास-पास यह जा रहा है, चना जोर गरम का बक्सा गले में डाले 16-17 साल का एक लड़का। आदमी आ-जा रहे हैं, पर यह आवाज नहीं लगाता, लटके नहीं गाता और चना जोर गरम की बिक्री का तो सारा दार-मदार ही लटकों पर है ।

तभी उसे मिला उसका एक साथी- नीचे से ऊपर जाता। उसे भी उसका मौन अखरा- "अबे, आवाज़ लगा, चुप क्यों है, गले में हाफू तो नहीं निकल आया।"

तमककर लड़के ने कहा- "हाफ्फू निकलै तेरी जोरू के गले में, जो हमसे सिकवाती फिरै। अबे चमचू ! हमारे हाफू निकलै, तो खायें क्या- तुझे तो तेरी बहू ने गोद ले रक्खा है, तुझे रोटियों का क्या फिकर ?"

साथी ने पत्ता काटा- "अबे चिमगादड़ के, तो

जलता क्यों है ? मेरी बहू तो तुझे भी गोद लेकर लड्डू बाँट देगी, पर यह तो बता कि गुम क्यों है ? लगा आवाज़, बाँध लटके, जो बरसै पैसा ही पैसा !"

लड़के ने कहा- "अबे, तू तो है चौखट की चप्पल कि जहाँ देखा, रपट पड़ा और हम हैं दूकानदार दुनिया की रमज पहचानते हैं। जहाँ पैसा बरसने का डौल होता है, वहाँ चना जोर गरम वाले की आवाज़ झींगरी हो जाती है।"

और तब मजाक की मूड से गम्भीरता के धरातल पर आते हुए उसने कहा- "यहाँ एक कौड़ी का भी चना नहीं बिक सकता। बात यह है कि जो लोग किनक्रेग पर उतर रहे हैं, उन्हें तो लगी रहती है हाबड़-ताबड़ कि पता नहीं मोटर में जगह मिलेगी या नहीं, कुली कहाँ गया, बीबी-बच्चे कहाँ हैं ? और जो लोग नीचे से ऊपर जा रहे हैं, उनका आधा जी तो फँसा रहता है चढ़ाई की थकान में और आधा होटल के फिकर में। फिर बताओ, इस सड़क पर चना कौन खाये ये तो यार मौज, के मसाले हैं !"

बात आई-गई हुई, पर सोचना स्वभाव हो गया है, मैं सोचता रहा। पहली बात, जो मन में आई, वह थी उस अपढ़ लड़के में मनोवृत्तियों के विश्लेषण की सूक्ष्म और गहरी क्षमता। यह क्षमता उस जीवनशक्ति का प्रदर्शन है, जो सदियों की दासता और संघर्ष में भी मरी नहीं है, दूसरी बात मन में आई यह कि इन अपढ़ बालकों के पास इतनी सरस, सजीव और स्वस्थ भाषा है कि हमारे महामहोपाध्याय इनसे अभी बरसों बोलना सीखें।

एक गाँव के मुखिया का घर- हम 3-4 मेहमान उनकी बैठक में भोजन की थालियों पर, जिनमें उनका एक लड़का भी। यह लड़का खाने में प्रगतिशील। मुखिया जी बोले- पण्डित जी, यह पहले जन्म में जानवर था, इसलिये आदमी की जून पाकर भी इसका ढंग नहीं बदला। खैर थूनता, मसकता तो यह नहीं, पर खाने को खाता नहीं, निगलता है ।

"इन सब में क्या भेद है, मेहरबानी करके यह बताइए मुखिया जी !" लड़के को उनकी झाड़ से बचने के लिए मैंने बात बदली, तो मुखिया जी बोले- "पण्डित जी, आदमी खाता है, जानवर निगलता है, भूत थूनता है और राक्षस मसकता है।"

और तब उन्होंने बताया कि खाना खाया जाता है धीरे-धीरे चबाकर, निगला जाता है पपोलकर जल्दी-जल्दी गले में उतार कर, थूना जाता है ढेरों भोजन बिना ठीक तरह चबाये पेट में भरकर और मसका जाता है बहुत तेजी से हाथ चलाकर चारों ओर खिण्डाते हुए और हाथ मुँह को सानते हुए। मुखिया जी ने यह बताया ही नहीं मुँह और हाथ की आकृति को मुद्राओं में बदलकर चारों भावों का प्रदर्शन भी किया।

शब्दों की इस सूक्ष्म भेद-रेखा से कितने शिक्षित परिचित हैं ?

हमारे प्रेस में एक बालक इंकमैन है- रिजवान। कोई बारह वर्ष का अशिक्षित बालक। उस दिन मेरे सिर में तेल मलते-मलते बातें करने लगा। अपने पिता की चर्चा में बोला- मेरे अब्बा पतली बेंत से मारते-मारते बधिया खींच देते थे।"

जो लोग बैल को बधिया करने की प्रक्रिया से परिचित हैं, वे ही इस अभिव्यक्ति का रस ले सकते हैं।

यही बालक एक दिन बोला- "जब आपने प्रेस खोला, तब तो मेरे पत्ते भी नहीं जमे थे!" जीवन

वृक्ष की कितनी मधुर और मर्मस्पर्शी अभिव्यक्ति है।

श्री शिवराम शर्मा देहात में जनमें, पले और पनप रहे हैं। मैं उन्हें 'देहाती प्रतिभा का मॉडल कहा करता हूँ। आप वैद्य हैं, अभिनेता हैं, वक्ता हैं, लेखक हैं। उन्होंने एक अध्यापक का स्कैच लिखा। उसमें एक जगह कहा है- "अजी, वह मास्टर तो गजब का पुतला था। गाँव भर के बालकों को उसने मोह लिया था- सब उसी के राग गाते थे, पर वह विनव्याहा था। थोड़े दिन बाद गाँव में खोट करने लगा।"

मैं जाने कितनी बार सोच चुका हूँ कि क्या कोई कथाकार दुराचार की इससे सुन्दर, संकेतात्मक और पूर्ण अभिव्यक्ति दे सका है ?

एक देहात में मैं भाषण देने गया। जिनके घर ठहरा, उनका छोटा लड़का मुझसे हिल गया। रात में वह मेरी बुक्कल में बैठा था कि वे बाहर से आये और बोले- "गोपाल, पण्डित जी के साथ तेरी दोस्ती तो पहले ही दिन गदरा गयी भाई!"

वाह, क्या पूर्णोपमा है, क्या लहजा है!

हमारे देश के पास, जनसाधारण के पास भाषा का ऐसा भण्डार है, कि हम उसकी उपेक्षा करके दर्शन और विज्ञान के ग्रन्थ भले ही लिख लें, बातचीत नहीं कर सकते। आम आदमी की बातचीत में मस्तिष्क का मायाजाल नहीं, हृदय की सरल सरसता होती है। चुटकुलों, कहानियों, दृष्टान्तों, शब्दों और अभिव्यक्तियों का ऐसा संग्रह उसके पास है, जो बहुमूल्य है। इस दिशा में बहुत गहरे-सतर्क प्रयत्नों की आवश्यकता है। ये प्रयत्न हमारी भाषा को समृद्ध और शक्तिशाली करने वाले होंगे, यह मेरा अखण्ड विश्वास है।

आप घण्टा भर किसी कुम्हार, चमार, धोबी, मल्लाह, किसान, ताँगेवाले या भड़भूजे के पास बैठिये, आपको 5-4 चमत्कारपूर्ण अभिव्यक्तियाँ या भावपूर्ण नये शब्द मिलेंगे। ये हमारी भाषा के ही हैं, मोंती हैं लाल हैं। मैं इनका चयन करने के लिए नई पीढ़ी के साहित्यकारों का आह्वान करता हूँ।

--कन्हैयालाल मिश्र, प्रभाकर

Delusion at midnight-III, Pen Ink & Water color on paper, 8.5x12 inch, Vijendra S Vij, 2021

कला

विनय कुमार

बोधगया अन्तरराष्ट्रीय कला बिनाले के संस्थापक निदेशक एवं क्यूरेटर तथा कैनवस संस्था के मानद संस्थापक सदस्य विनय कुमार 1988 से नियमित रूप से बिहार सहित राष्ट्रीय तथा अन्तरराष्ट्रीय कलाओं पर हिन्दी में लेखन कर रहें हैं। "कैनवस" नामक कला पत्रिका के सम्पादक विनय कुमार के नवभारत टाइम्स, हिन्दुस्तान, जनसत्ता, रविवार, समाकालीन कला, जनशक्ति आदि में लेख प्रकाशित। 'कला कहाँ है', 'बिहार की समकालीन कला', 'समकालीन लोक कला' शीर्षक से तीन पुस्तकें प्रकाशित। भारतेन्दु हरिश्चंद्र पुरस्कार तथा दिनकर पुरस्कार प्राप्त।

ईमेल - kvinay31@gmail.com

मिथिला कला की आधुनिक अभिव्यक्ति हैं अलका दास के चित्र।

-विनय कुमार

"एक स्थान पर जड़ हो गयी मिथिला कला को आधुनिक / समकालीन कला के संदर्भ में नए ढंग से देखने की दृष्टि एवं परिभाषित करने की क्षमता विकसित हुयी। संतोष दास, महालक्ष्मी कर्ण, शांतनु दास, अविनाश कर्ण, शालिनी कर्ण, दिलीप पासवान और अलका दास जैसे कलाकारों की एक नयी पीढ़ी सामने आयी। जिसने मिथिला कला के माध्यम, विषय, मैटेरियल सभी में नवीनता देखी। उसमें कई इनोवेशन किये। ..."

यूँ तो मिथिला कला का नाम लेते ही देश की सर्वाधिक संवेदनशील और प्रभावी लोक और पारंपरिक कला की छवि हमारे सामने उभरती है। सीता के ब्याह के समय राजा जनक के द्वारा मिथिलांचल के घरों की दीवारों को चित्रित करने से लेकर विभिन्न काव्यों और मिथकीय चरित्रों की, तो दूसरी तरफ तंत्र की भी सांस्कृतिक चित्रात्मक अभिव्यक्ति की जो

अलका दास

शानदार परम्परा कायम रही है वह इस क्षेत्र की अद्भुत सांस्कृतिक उपलब्धि है। जन-जन में रचे बसे सांस्कृतिक, पारिवारिक, विवाह और अन्य अवसरों पर प्राकृतिक और आधुनिक रंगों के सहारे होनेवाली एक अत्यंत ही पारंपरिक अभिव्यक्ति को ही हम जानते रहे हैं। सीता देवी, गंगा देवी, जगदम्बा देवी, महासुंदरी देवी, बड़वा देवी, यमुना देवी, चानो देवी, गोदावरी दत्त, शांति देवी यानी स्त्रियों के वर्चस्व वाली कला। यहाँ परम्परा का हस्तांतरण अमूमन स्त्री से स्त्री को होता रहा। फलत: गुरु भी ज्यादा स्त्रियाँ ही रहीं। पर इसमें एक परिवर्तन आता है, जब जड़ होती जा रही मिथिला कला को समय के साथ चलने में मदद करने को मिथिला आर्ट स्टीट्यूट आता है। मैं खासकर संतोष दास का नाम लेना चाहता हूँ जिन्होंने बड़ौदा से आधुनिक कला की शिक्षा लेकर मिथिला लोक कला में एक कलाकार गुरु के रूप में दखल दिया। एक स्थान पर जड़ हो गयी मिथिला कला को आधुनिक / समकालीन कला के संदर्भ में नए ढंग से देखने की दृष्टि एवं परिभाषित करने की क्षमता विकसित हुयी। संतोष दास, महालक्ष्मी कर्ण, शांतनु दास, अविनाश कर्ण, शालिनी कर्ण, दिलीप पासवान और अलका दास जैसे कलाकारों की एक नयी पीढ़ी सामने आयी। जिसने मिथिला कला के माध्यम, विषय, मैटेरियल सभी में नवीनता देखी। उसमें कई इनोवेशन किये।

अलका दास इसी पृष्ठभूमि में उभरती हुयी मिथिला कलाकार हैं। इनके चित्रों को

"उन्हें पता है कि चंपारण सत्याग्रह यानी नील किसानों का आन्दोलन, तीन कठिया खेती पद्धति के विरुद्ध स्थानीय किसानों के विद्रोह के मूल में क्या था। नील की खेती, उससे ऊसर होते, बंजर होते खेत, उनके पक्ष में अँग्रेजों के बनाये कानून और उनके परिप्रेक्ष्य में किसानों का होता शोषण ऐसे तत्व हैं जो उनके चित्रों के अवयव होंगे परन्तु ये उनके चित्रों में किस सहजता से अभिव्यक्त होते हैं कि आपको पता भी नहीं चलता। आप उसके सौंदर्यात्मक अभिव्यक्ति के सहारे कलाकृति के मूल तक चले जाते हैं। ..."

देखकर आप अचंभित रह जाएँगे कि क्या कला के जरिए ऐसे मुद्दे भी अभिव्यक्त हो सकते हैं वो भी, उसकी कलात्मकता को, उसके लालित्य को बगैर हानि पहुँचाये हुए। अलका की कला यात्रा 10-12 वर्षों की है। अलका ने कला की विधिवत शिक्षा मिथिला आर्ट इंस्टीट्यूट के संतोष कुमार दास से प्राप्त की। जाहिर है संतोष दास के मिथिला कला के साथ किये गये प्रयोगों ने इन्हें काफी प्रभावित किया। परम्परागत विषय

यथा रामायण, राधा कृष्ण, तंत्र चित्र, मिथकीय हीरो यथा राजा सल्हेस आदि से आगे बढ़कर नये विषय, परिवेश-पारिस्थितिकी इतिहास, समाज, किसान, संघर्ष जैसे विषयों को अपनी कलात्मक अभिव्यक्ति का हिस्सा बनाया। मिथिला चित्र शैली की शक्ति को नये ढंग से पहचाना। परम्परा को आधुनिक तत्वों से मेल कराया और एक कला के नये मुहावरे को रचने की कोशिश अलका के चित्रों में हमें देखने को मिलती है।

अलका के चित्र नैरेटिव पेंटिंग्स की कैटेगरी में रखे जा सकते हैं। यूँ भी हम जानते हैं कि इस देश में लोक कलाओं में कथात्मक (नैरेटिव पेंटिंग्स) की सशक्त परम्परा रही है चाहे वो कालीघाट शैली हो या, जाइपेटिया शैली हो या फिर बंगाल से उड़ीसा तक फैली पट चित्रों की परम्परा हो। अलका ने इसमें जो महत्वपूर्ण काम किया है, वह है मिथिला शैली में आधुनिक और समकालीन विषयों की कथात्मक (नैरेटिव) ढंग से अभिव्यक्ति । मैं सबसे पहले उनके 'गदर'

श्रृंखला के चित्रों का उल्लेख करना चाहूँगा। यह श्रृंखला दरअसल, इतिहास का एक तरह से पुनर्लेखन है। (मिथिला में चित्रकारी को लिखना ही कहते हैं) गदर श्रृंखला में उन्होंने पराधीन भारत के एक महत्वपूर्ण अध्याय "कामागाटामारु" प्रकरण का अद्भुत चित्रण किया है। गुलाम भारत की वेदना, तत्कालीन पंजाब के किसानों की खराब होती हालत, उनके पलायन की पृष्ठभूमि, कनाडा जाकर कठोर श्रम, कनाडा में अपने को बचाये रखने का संघर्ष, फिर कनाडा में स्वाधीनता की चिनगारी, पाश्चात्य और पूर्वी मूल्यों का संघर्ष, कामागाटामारु जहाज से सिक्खों का प्रस्थान, जहाज के संघर्ष, उन पर कलकत्ता में हुई गोलीबारी यानी अँग्रेजों के अत्याचार की गाथा का एक पूरा अध्याय अलका ने इस श्रृंखला में रच दिया है। अद्‌भुत स्पेस और रंग की योजना, जिन्हें आप परंपरागत मिथिला कला में कहीं नहीं पाते हैं। मिथिला चित्रकला में आधुनिकता का एक नया मुहावरा देने वाले संतोष दास की परम्परा को अलका दास आगे बढ़ाती हैं। छोटी-छोटी आकृतियों के सहारे माधवी पारेख और अर्पिता सिंह की तरह अलका भी पूरी दुनिया रच डालती हैं।

इसी तरह अलका चंपारण सत्याग्रह को चित्रित करती हैं। अलका के पास एक कलाकार की परिपक्व दृष्टि है। उन्हें पता है कि चंपारण सत्याग्रह यानी नील किसानों का आन्दोलन, तीन कठिया खेती पद्धति के विरुद्ध स्थानीय किसानों के विद्रोह के मूल में क्या था।

"जैक्वार्ड और डॉबी लूम के आविष्कार के बाद वस्त्रों की दुनिया में नयी क्रांति आ गई है क्योंकि इसमें डिजाइन का काम ज्यादा सहज और आसान हो गया है। साथ ही समय की भी बचत होती है। लेकिन बावन बूटी के कलाकार परम्परागत करघे पर ही काम करना पसंद करते है।..."

नील की खेती, उससे ऊसर होते, बंजर होते खेत, उनके पक्ष में अँग्रेजों के बनाये कानून और उनके परिप्रेक्ष्य में किसानों का होता शोषण ऐसे तत्व हैं जो उनके चित्रों के अवयव होंगे परन्तु ये उनके चित्रों में किस सहजता से अभिव्यक्त होते हैं कि आपको पता भी नहीं चलता। आप उसके सौंदर्यात्मक अभिव्यक्ति के सहारे कलाकृति के मूल तक चले जाते हैं। यही अलका दास की सफलता है।

अलका दास की एक और श्रृंखला है जिसका ज़िक्र आवश्यक है, वह है अपनी पारिस्थितिकी यानी पर्यावरण से जुड़े चित्र। वे भूमंडलीकरण के उपरान्त तेजी से क्षय होते पर्यावरण और उसके खतरे को महसूस करती हैं। और संवेदनशील और प्रखर मानस इस "महसूस किये जाने" को कलात्मक रूप से अभिव्यक्त करता है। कटते पेड़, मारे जाते पशु-पक्षी, नष्ट होता पारिस्थितिकी तंत्र और लोक कलाओं में इसकी सहज अभिव्यक्ति उनके चित्रों की खासियत हैं।

इन सबके अलावा अलका मिथिला कला की मुख्य धारा में भी रचनाएँ करती रहती हैं यथा अरिपन, कोहवर, नैना जोगिन आदि-आदि।

अलका अपने परम्परागत रेखाओं के (जोकि मिथिला चित्रकला की अपनी पहचान है) अलावा कागज और कैनवस के स्पेस डिजाइन, नये-नये रंगों के व्यवहार के कारण अलग हो जाती हैं। वे सभी तरह के मैटेरियल (सामग्री) का उपयोग करती हैं। ब्रश, पेन, कागज, कैनवस, प्राकृतिक रंग, एक्रिलिक कलर, तैल रंग, यानी माध्यम, सामग्री की किसी सीमा में अलका दास नहीं बँधी हैं। हम आने वाले दिनों में उनसे

एक बेहतर कलाकार की उम्मीद कर सकते हैं क्योंकि एक कलाकार के रूप में वे अपने समाज, राजनीति, अर्थव्यवस्था, प्रौद्योगिकी और समय को जिस तरह से देखती और उन्हें कलाकृति के रूप में पुनर्व्याख्यायित करती हैं वह उन्हें आम मिथिला लोक कलाकारों से अलग खड़ा करता है और यही उनकी ताकत है।

-विनय कुमार

1.

वाह! अति सुन्दर अंक। देखते -देखते एक सुनहरा साल का सफ़र पूरा हो गया। इस सुअवसर पर पूरे अनन्य परिवार को बधाइयाँ।
ताज़ा अंक मिला, संपादकीय में पूरी पारदर्शिता संग साल भर का आकलन पढ़कर काफी गर्व महसूस हुआ। आगे आने वाले तमाम सुनहरे वार्षगाँठ की भी अग्रिम शुभकामनाएँ।
पत्रिका खोलते हीं आदरणीया उषा किरण जी की कहानी "मुझे माफ़ करना शिमोनी" ने मन आकर्षित कर लिया। आदरणीय संतोष व्यास जी की कविता "पढ़ बेटी" से काफी प्रभावित हुई। जैसा कि अपने घर में बचपन में सुनने को मिलता था बिल्कुल वैसा लगा।

पूरी पत्रिका हीं उत्कृष्ट और शानदार है। सभी रचनाकारों को सादर प्रणाम और शुभकामनाएँ।

-श्वेता सिन्हा (अमेरिका)

2.

अनन्य का अंक बहुत रोचक और विविधता पूर्ण है। उषा किरण खान की कहानी नए अंदाज की है। संध्या सिंह की कविता तो सचमुच सारी स्थितियों को कुछ शब्दों मे समेट कर वातावरण को ही शब्द दे देती है। दिनेश सिंदल जी और अन्य सामग्री भी अन्यतम है। सम्पादक मंडल को बधाई। समूची सामग्री एक बार में ही पढ़ने की आतुरता इसकी उत्कृष्टता का प्रमाण है

-सरोजनी प्रीतम (नई दिल्ली)

3.

बहुत सुंदर संयुक्तांक है। आवरण चित्र खूबसूरत बना है। आदरणीय अनूप दा की मन की बातें पढ़कर लगा कि जैसे बच्चे के प्रथम वर्षगाँठ पर पिता की भावनाओं ने शब्द रूप ले लिया हो। हिन्दी के बीज को नव पौध के रूप में पनपने देखने का सुंदर भाव।

प्रिय प्रीति के सुंदर माहिया एवं एक क्लिक पर उनको सुनने की व्यवस्था, वाह!!

सुंदर कहानी, गीत नवगीतों से सजा खूबसूरत संयुक्तांक हेतु बहुत बहुत बधाई अनूप दा और पूरी टीम को।

--शर्मिला चौहान (भारत)

अबान रज़ा

अबान रज़ा ने अपनी पहली एकल प्रदर्शनी **"सामान, लोग और एक छोटी सी जगह"** शीर्षक से 2020 में मुंबई के मिरचंदानी + स्टीनरुके गैलरी में आयोजित की। 2022 में उन्होंने अपनी दूसरी प्रदर्शनी लगायी जिसका शीर्षक था **"नीले आकाश के बारे में कुछ जबरदस्त है"** जिसने 'बड़े अल्पसंख्यकों' और अन्य 'कामकाजी बहुसंख्यकों' के जीवन और उनके विरोध करने तथा अस्तित्व के अधिकार के बारे में कुछ बुनियादी सवाल उठाने का प्रयास किया। **"सहमत"** के लिए उनके क्यूरेटोरियल अनुभव में शामिल हैं: **जश्न मनाना, रोशन करना, फिर से युवा करना, 70 पर संविधान की रक्षा [2020], भारत हारा नहीं [2021] और हम सब सहमत [2022]** शामिल हैं।

वह दिल्ली में रहती हैं और काम करती है।

ईमेल - abanraza@gmail.com

Delhi Road, Oil on Canvas, 48x72 inch, Aban Raza, 2022

चित्र और चित्रकार

कितना है बद-नसीब 'ज़फ़र' दफ़्न के लिए
दो गज़ ज़मीन भी न मिली कू-ए-यार में

चित्रकार : विजेंद्र एस. विज
Title: Zafar-Bahadur Shah, 2020,
Pen Ink & Water color on Paper, 8.5x12 inch
Artist: Vijendra S Vij